

FOREWORD

Congratulations on completing 4 insightful years of Syaahi!!

Over the past four years, Syaahi has been a space to celebrate transformative journey of Future Leaders. The stories inked here are about the building connection, demonstrating resilience and cultivating self-awareness through various fellowship processes.

Community immersion enables fellow to develop strong bonds with people they once saw as strangers, forging lifelong relationships. They connect with culture, with nature, and with themselves.

Continuous engagement with Public System is the key to develop resilience and build trust with officials to drive impact down to the last mile.

Looking inside through Vipassana strengthens connection with the self.

Each story is unique, yet all remind us of the fundamental – Humanity thrives on connection.

As you turn these pages, I hope you rediscover the joy of connection and its profound impact on the society.

Warm Regards



Anshu Dubey Core Team Member Piramal School Of Leadership

दर्पण

आईना और तलाश

BECOMING ME!

WHO AM !?

INSPIRE AND RISE

सादा जीवन

Finding Home

यादगार महीना

JOURNEY OF TRANSFORMATION

मेरा दूसरा गाँव

अनजाने रास्तों से नए परिवार तक

कठिन राहों पर एक यात्रा

A Journey to Belonging

CI: एक अनजानी राह पर मेरी खूबसूरत यात्रा

गाँव की यादें

आत्मपरिवर्तनाचा अनुभव

गाँव के रस्ते, गाँव की गलियाँ...

मंथन

नन्ही उड़ान

The Journey of Reflection and Self-Discovery in Gandhi Fellowship

जिम्मेदारी, असुरक्षा, डर

Learning About Learning

शिक्षा में साथी बनें

खूबसूरत गांव

"Breezes of Assam"

The Boy Who Asked Why?

आख़िर गांव क्यों नहीं?

मा

Through the Strom

फिर से खुदखुशी

ज़रूरत और विलासिता की परिभाषा

WHISHPER OF NARGA!

महिलाएं और खेल?

अनुभूति

Sohrai Art

Gateway to Compassionate Leadership

A Journey of Empathy, Learning, and Transformation

MY EXPERIENCE WITH COMMUNITY IMMERSION

ज्ञान से करुणा तक

पहाड़ों के बीच शिक्षा का दीप

भारत को बनाना है, तो भारत को जानो तो सही...

लोगों को लोगों की कमी

The Silent Struggles

माँ जैसी ममता

मेरी एक और मां

परिवर्तन

A library that breathed again- A Story of Change

एक कदम परिवर्तन की ओर

शून्यता में पूर्णता

A story of persistence and change

मेरी मेहनत, मेरी जीत

JOURNEY OF CHANGE

A Journey of Trust and Self-Discovery

एक खामोश जीत

From the editors

Coming from different corners of India, individuals have stepped into Fellowship journey, each carrying unique experiences, aspirations, and dreams and every fellow finds themselves on a path of self-discovery, resilience, and transformation.

Community Immersion (CI) is one of the major milestones of the Gandhi Fellowship journey, where reality becomes the best teacher—challenging assumptions, revealing strengths, and exposing areas of growth. Some fellows learn the power of listening, understanding the silent struggles of communities. Others recognize their own limitations and push past them, discovering new strengths along the way. In the quiet depth of Vipassana, some fellows discover an inner world they never knew they had, learning patience, self-awareness, and emotional strength. The Private Dream Project (PDP) provides a space to dream, ideate, and take steps toward turning aspirations into impactful projects.

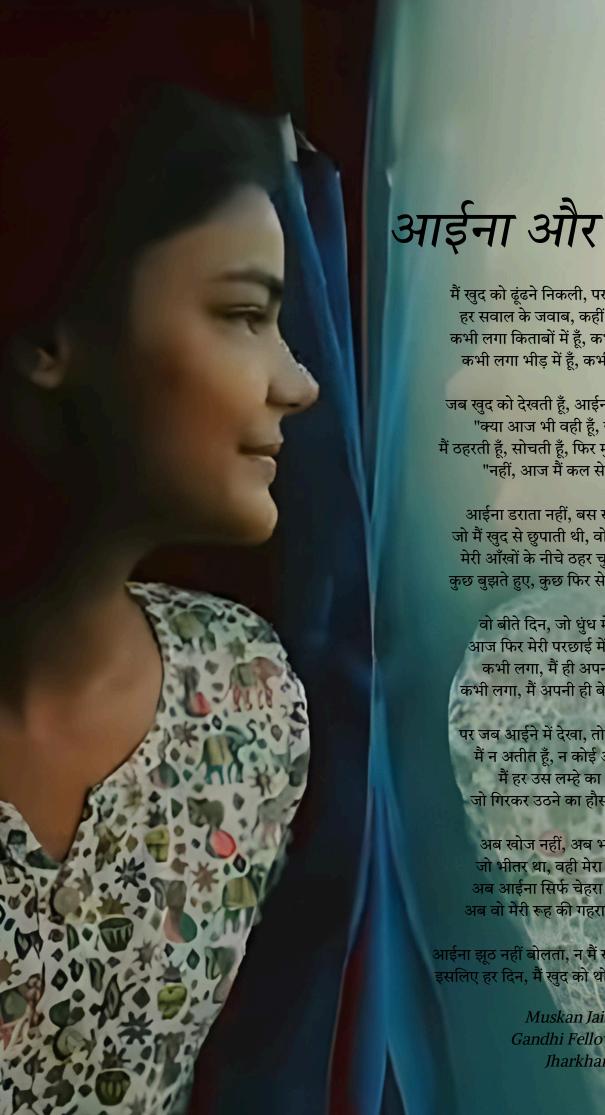
For the first time, Karuna Fellows have joined this transformative experience, standing alongside Gandhi Fellows in the pursuit of change. They carried out a community project (CP) that helped them understand the need of their communities and design intervention accordingly. Together, they create a dynamic environment of collaborative learning, shared struggles, and collective growth.

At its heart, Syaahi 4.0, with its theme "Ink of Expression," captures these personal and collective journeys through four distinct sections. Darpan (दर्पण) serves as a mirror for self-reflection, where fellows confront their growth, challenges, and evolving identities. Manthan (मंथन) stirs thoughts and ideas, encouraging critical discussions and fresh perspectives. Parivartan (परिवर्तन) embodies personal and social transformation, highlighting the shifts within individuals and the communities they serve. Finally, Anubhuti (अनुभूति) embraces empathy, bringing forth stories that resonate deeply and connect us all.

As we turn these pages, we invite you to pause, to reflect, and to see a piece of yourself in these words. This magazine is a celebration of how far we have come, and a reminder of how much more lies ahead. Let ink flow, let voices rise, and let us continue to create together.

एक अनदेखा सत्य या एक नई दृष्टिकोण?

Moments of self-discovery



आईना और तलाश

मैं खुद को ढूंढने निकली, पर रास्ते ही खो गए, हर सवाल के जवाब, कहीं धुंध में सो गए। कभी लगा किताबों में हूँ, कभी किसी चेहरे में, कभी लगा भीड़ में हूँ, कभी सूने अंधेरे में।

जब खुद को देखती हूँ, आईना सवाल करता है-"क्या आज भी वही हूँ, जो कल थी?" मैं ठहरती हूँ, सोचती हूँ, फिर मुस्कुराकर कहती हूँ-"नहीं, आज मैं कल से बेहतर हूँ।"

आईना डराता नहीं, बस सच दिखाता है, जो मैं खुद से छुपाती थी, वो साफ बताता है। मेरी आँखों के नीचे ठहर चुके कुछ सवाल, कुछ बुझते हुए, कुछ फिर से जलने को तैयार।

वो बीते दिन, जो धुंध में खो गए थे, आज फिर मेरी परछाई में लौट आए हैं। कभी लगा, मैं ही अपना अतीत हूँ, कभी लगा, मैं अपनी ही बेड़ियों में कैद हूँ।

पर जब आईने में देखा, तो जवाब मिला— मैं न अतीत हूँ, न कोई अधूरी तस्वीर, मैं हर उस लम्हे का अक्स हूँ, जो गिरकर उठने का हौसला रखता है।

अब खोज नहीं, अब भटकना नहीं, जो भीतर था, वही मेरा सच है सही। अब आईना सिर्फ चेहरा नहीं दिखाता, अब वो मेरी रूह की गहराइयाँ बताता है।

आईना झूठ नहीं बोलता, न मैं खुद से छुप सकती हूँ, इसलिए हर दिन, मैं खुद को थोड़ा और संवारती हूँ।

> Muskan Jaiswal Gandhi Fellow, B-17 **Iharkhand**



I stepped in quiet, unsure, unseen,
A mind full of questions, a world in between.
Not one to lead, nor one to speak,
Yet deep inside, I felt the need.

The halls of change, the fields so vast, Challenge whispered, grow, hold fast. I stood before faces eager to learn, And in their eyes, I saw my turn.

From words unspoken to voices raised, From silent thoughts to plans well-phrased. Each idea shaped, each effort made, Unraveled knots once in my head.

> Through every effort, Dreams told, I found my courage, my spirit bold. Simdega's soil, Jharkhand's skies, Held my failures, let me rise.

I learned to listen, to shape, to guide, To hold my fears, yet stand with pride. No longer hidden, no longer small, I am the change; I've heard the call.

With every lesson, step, and stand, I shape my fate with steady hands. Not just for me, but for those behind, A journey of growth, of heart, of mind.

> Anshuman Gandhi Fellow, B– 16 Iharkhand

WHO AM I ?

A question that lingers, a whisper, a cry, It haunts me, taunts me - no answer in sight.

Am I the daughter, the wonder, the pride,
Yet longing to wander, to run, to hide?

Or the strong one, the steady, the one who stands tall,
Yet craving a moment to let herself fall?

A friend who bears burdens, in silence, alone,
Fearing the weight of a love overthrown.

Or the fighter, the fearless, the bold and the free,
Who won't hide her fire - who dares to be me?



A lover - so reckless, so foolish, so true,
Lost in the magic, the madness, the blue.
So why all the contrast? The chaos, the art?
Who am I truly, if not every part?
Perhaps just a woman - imperfect, unchained,
With scars that are stories, with flaws that remain.
No less, no more, no puzzle, no plan,
Just human - like others, yet all that I am.

Kaberi Nag Gandhi Fellow, B-16 Jharkhand



गांधी फेलोशिप में शामिल होने के बाद सबसे अधिक चर्चा जिस चीज़ की होती थी, वह था इसका Community Immersion कार्यक्रम। पता चला कि इसमें किसी गाँव में जाकर रहना होता है, वहाँ के लोगों की संस्कृति और जीवनशैली को करीब से समझने का प्रयास करना होता है। बनारस में पले-बढ़े "राजा बाबू" के लिए, जिसने कभी अपने ही गाँव में एक रात नहीं बिताई थी, यह सोचना भी चुनौतीपूर्ण था कि वह किसी दूसरे राज्य के अनजान गाँव में जाकर कैसे रहेगा।

हालांकि, सौभाग्य से मुझे Community Immersion के लिए घर खोजने में ज्यादा कठिनाई नहीं हुई, लेकिन पहला सप्ताह मेरे लिए बेहद कठिन रहा। दिसंबर की सर्द रातें और मिट्टी के घरों के झरोखों से आती ठंडी हवाएँ शरीर को सुन्न कर देती थीं। गाँव का वातावरण पूरी तरह नया था, न पर्याप्त बिजली, और न ही शहरी जीवन की कोई सुविधा। हर रात यह सवाल मन में आता था कि "आखिर इस अनुभव का मकसद क्या है?" लेकिन जैसे-जैसे समय बीता, इन सवालों के जवाब मुझे खुद-ब-खुद मिलते गए।

धीरे-धीरे गाँव वालों की आत्मीयता और उनके अपनेपन ने मेरी सभी मुश्किलों को हल्का कर दिया। मेरे अपने परिवार के बाद यह पहला ऐसा परिवार था, जिसने मुझे इतनी गर्मजोशी से अपनाया। वहाँ रहते हुए मैंने धान की कटाई की, गायों को जंगल में चराया, आलू के खेत तैयार किए, और कई ऐसे काम किए, जो इससे पहले मैंने कभी नहीं किए थे। हर शाम बच्चों के साथ क्रिकेट खेलना और रात में अलाव जलाकर आग तापना मेरी दिनचर्या का सबसे खूबसूरत हिस्सा बन गया था।

सबसे अनोखा अनुभव तब हुआ जब मैंने गाँव के पास के एक ढाबे पर 15 दिन तक वेटर का काम किया और लगभग 2000 रुपये कमाए। यह मेरी ज़िंदगी का पहला ऐसा अनुभव था, जहाँ मैंने महसूस किया कि परिश्रम से अर्जित हर एक रुपया अपनी एक अलग ही अहमियत रखता है।

लेकिन इस यात्रा का सबसे कीमती हिस्सा वह रिश्ते थे, जो मैंने इस दौरान बनाए। गाँव के लोगों ने मुझे सिर्फ एक मेहमान की तरह नहीं, बल्कि अपने परिवार के सदस्य की तरह अपनाया। वहाँ के बच्चों की मासूम हँसी, बुजुर्गों की सीख, और उस मिट्टी की खुशबू इन सबसे मैंने सीखा कि ज़िंदगी सादगी में भी खुबसुरत हो सकती है।

Community Immersion की यह यात्रा मुझे जीवनभर याद रहेगी। यह अनुभव न केवल मेरी सोच को बदलने वाला था, बल्कि इसने मुझे यह भी सिखाया कि असली भारत उसके गांवों और लोगों की आत्मीयता में बसता है। मैं हमेशा गांधी फेलोशिप का आभारी रहूँगा कि उसने मुझे इस अनुभव का हिस्सा बनने का अवसर दिया। निस्संदेह, यह मेरे जीवन के सबसे अद्भुत अनुभवों में से एक था, जो हमेशा मेरे साथ रहेगा।

> Aditya Singh, Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand

यादगार महीना

फेलोशिप ज्वाइन करने से पहले मुझे इसकी सबसे मजेदार चीज कम्युनिटी इमर्शन ही लग रही थी और तभी से मैं इसके लिए बहुत उत्साहित था। जब मुझे पता चला कि हमारे बैच से यह 21 दिन की बजाय 30 दिन का होने वाला है तो मेरा उत्साह दोगुना हो चुका था। कम्युनिटी इमर्शन में घर मिलने के बाद मैं बहुत खुश था। पहले दिन घर पहुंचने पर जोरदार स्वागत हुआ। घर में जाने से पहले मन में कई खयाल थे कि मैं जो सोच कर जा रहा हूं वैसा होगा या नहीं पर जैसे जैसे दिन बीते मैंने जो सोच था उससे बेहतर ही होता चला गया। घर के सदस्यों सिहत गांव वालों से बहुत सम्मान और प्रेम मिला। कभी कभी अपने ऊपर भी संदेह हुआ कि मैं इसके लायक हूं भी या नहीं। कम्युनिटी इमर्शन हाउस की सबसे अच्छी बात यह थी कि उसमें 11 बच्चे थे। इन बच्चों की वजह से मेरा 1 महीना काफी अच्छा गुजरा था। उनकी मदद से ही मैं विभिन्न काम करता था। कम्युनिटी में कहीं भी जाना हो उनमें से कुछ हमेशा मेरे साथ ही जाते थे।

किसी अनजान दूसरे राज्य से आए किसी व्यक्ति को इतना प्यार और सहयोग मिलेगा भला कौन हो सोचता है। वहां रहते हुए जंगल, बांध, पहाड़ की तरफ जाना सबसे पसंदीदा काम बन गए थे। मैं मैदानी भाग से आता हूं तो मुझे पहाड़ और जंगल बहुत आकर्षित करते हैं। मैं जंगल जाकर वहां बैठकर चारों तरफ पेड़ों को देखता रहता था। पहाड़ के ऊपर चढ़ना मेरे लिए एकदम नया अनुभव था और तभी पता चला कि ऊपर चढ़ना कितना किठन है। जंगल में जाकर बेर, अमरूद, जंगली करौंदे खाना मेरे लिए नया और सुखद अनुभव था। शहर की भीड़ और शोर से दूर जंगल मन को शांति देता था। "शारीरिक साक्षरता" कार्यक्रम से जुड़े होने के कारण मैं बच्चों को खेल और अन्य शारीरिक गतिविधियों के लिए भी प्रेरित कर रहा था, जिसके माध्यम से वे जीवन कौशल से संबंधित चीजें सीखने में सफल रहेंगे। वे उन गतिविधियों के माध्यम से क्या सीख रहें थे उन्हें यह समझ नहीं आ रहा था पर वे पूरे उत्साह और ऊर्जा के साथ उसमें प्रतिभाग करते थे। घर के अलावा आस पड़ोस के बच्चे भी इसमें शामिल होने लिए आते थे। इससे मुझे उनके साथ गहरे संबंध बनाने में देर नहीं लगी।



गांव में विभिन्न कार्यों के लिए जाना पड़ता था, जिसमें घर के काम से लेकर कुछ सामुदायिक कार्य रहते थे। हमें गांव में रहते हुए छात्रवृत्ति और ड्रॉपआउट की समस्या पर काम करना था। इसके लिए मीटिंग आयोजित करना एक बड़ा काम था, खैर गांव वाले इसके लिए सहयोग करते थे। इसी कारण काफी लोग मुझे जानने भी लगे थे। बच्चों को शाम के समय पढ़ाना और उनसे गांव के बारे में पूछना मेरा पसंदीदा काम बन गया था। उनके अनोखे और नए जवाब मेरी सोच को और विस्तार देते थे। शीतकालीन अवकाश के समय तो बहुत सारे बच्चे पढ़ने के लिए आने लगे थे। उन्हें देखकर मेरा मन लगा रहता था। घर के कामों- धान को उबालना और सुखवाना, आलू खोदना में मना किए जाने के बाद भी हाथ बंटाना सुकून के पल थे। घर के लोगों को द्वारा मेहमान की तरह रखे जाना, जबरदस्ती कपड़े धुल दिए जाना तथा ऐसे ही अनेक प्रकार से खयाल रखना मेरे जीवन में हमेशा अविस्मरणीय पलों के रूप में बस गए हैं जिन्हें मैं चाहकर भी कभी नहीं भूल पाऊंगा।

शुरुआत में लग रहा था कि 1 महीना कैसे वहां रहूंगा, पर घर और गांव वालों के प्यार और सहयोग से यह एक महीना पता नहीं कब बीत गया था। इस एक महीने में बहुत सारी यादें बन गई थीं। अब वहां से वापस आने की बारी थी। मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि मेरे वापस आने की खबर से वे इतने भावुक हो जाएंगे। वहां से वापस आते वक्त सबकी आँखें नम थीं। वे मुझे वहीं रुकने के लिए बोल रहे थे, जिस पर मैंने उन्हें बताया कि मुझे वहां से आना होगा। मैंने उन्हें भरोसा दिलाया कि मैं बीच बीच में उनसे मिलने आता रहूंगा। उस दिन लगभग 20 मिनट तक मैं घर के बाहर ऑटो वाले भैया को रोके खड़ा सबसे बात करता रहा। उनके उतरे चेहरे देखकर मेरा भी वहां से आने का मन नहीं हो रहा था, खैर मुझे आना ही था तो मैंने अपना हृदय मजबूत किया और वहां से निकल आया। अभी मैं बीच बीच में उनसे मिलने जाता रहता हूं। वे मुझे घर के सदस्य की तरह मानते हैं जिसके कारण वे घर की बातें मुझसे साझा करते हैं। यह एक महीना मेरे लिए हमेशा यादगार रहेगा।

Adarsh Kumar Gandhi Fellow, B- 17 Jharkhand

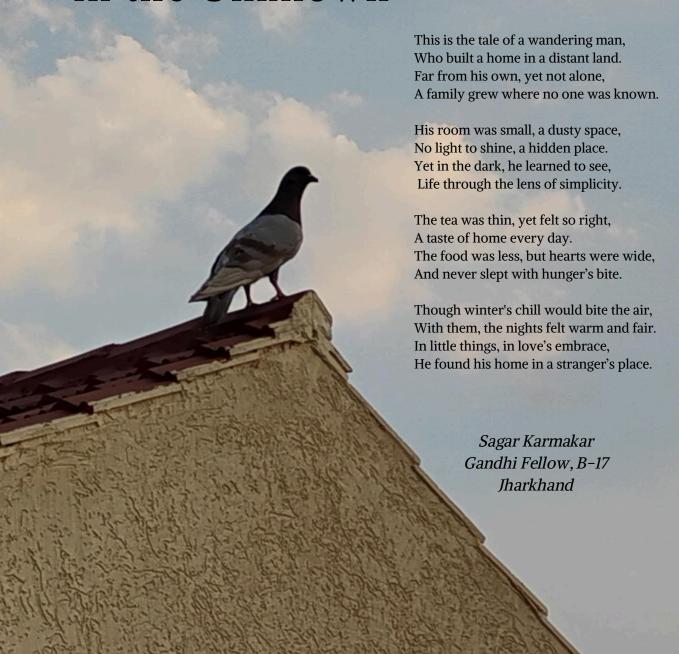


Rich in heart, kind in deeds Humble in nature, selfless in spirit No matter how the situation will be, try not to isolate yourself but be free This world has so many opportunities, you never know you can be the inspiration for your community You can do it tell this to yourself, dream big and make it happen for yourself Never regret what you love, see yourself always rising above. Study hard learn something new every day, Stay healthy and never forget to play Always remember be rich in heart and kind in deeds, Be humble in nature and selfless in spirit No matter how the situation will be. try not to isolate yourself but be free.

> Kummari Mounika Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand



The Journey Of Adaptation Finding Home in the Unknown





When I first approached my 30-day Community Immersion (CI) as part of my fellowship, I initially saw it merely as a process-finding a comfortable home and settling in. But as I stepped into the village, I discovered not just a new environment but a stark social divide. Upper-class families lived relatively well, with their children attending private schools, while lower-class families struggled with the most basic needs—lacking toilets, bathrooms for girls, transportation, and even normal cooking utensils. Many had to travel long distances for water and relied on collecting wood from the forest just to prepare meals.

Education was not a priority for the lower-class community. Without financial security or even a proper place to study, children rarely graduated. Witnessing these disparities, I realized that if I stayed in my comfort zone, living in a big house, I would never truly understand their struggles. I needed to decondition myself, to step into their world and experience life as they did.

Finding a home in a lower-class neighborhood was not easy, but eventually, I found a place. I immersed myself completely—helping with farming activities like harvesting potatoes, planting onions, and drying paddy. Slowly, I became part of their daily lives, and the community began accepting me as one of their own. However, another harsh reality struck me: the lack of emphasis on education.

Determined to change this, I took an initiative. Along with two class 11 students, I started evening tuition classes, and soon, more students began attending. I mentored the two boys, ensuring that even after I left, they would continue teaching. Their dedication moved me—when given a choice between spending money on a New Year picnic or investing in education, they chose to buy whiteboards to teach.

Beyond tuition, I saw that many families were unaware of scholarships, leading to high dropout rates. To address this, we organized a street play to spread awareness about education. The impact was immediate —some children re–enrolled in school, and the mindset toward learning began to shift.

But my journey wasn't just about teaching; it was about understanding. I spent time fishing with the locals, visiting homes, and discussing their lives. Every day, I talked to families about education, sharing its importance. Slowly, people started aligning themselves with my thoughts. It was no longer just me trying to understand them—I had become a part of their world.

As my 30 days came to an end, the community embraced me, inviting me into their homes to share meals. Those weeks became the most meaningful experience of my life. I learned the power of resilience, hard work, and collective support. More importantly, I realized that real understanding comes only when we step into another's world—not as observers, but by living their reality.

This experience transformed me. It taught me that we often shy away from difficult challenges, believing we won't succeed. But when we truly immerse ourselves, face the struggle, and persist, we grow beyond our limitations. My Community Immersion was not just an assignment; it was a transformation that reshaped my perspective on society, privilege, and the true meaning of connection.

Sunil Harijan Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand



मेरा दूसरा गाँव

मैंने कभी नहीं सोचा था कि रामगढ़ जिले के चितरपुर ब्लॉक के एक छोटे से गाँव में मुझे परिवार जैसा संबंध मिलेगा। करुणा फेलोशिप यात्रा ने सामुदायिक प्रवास (Community Project) का अवसर प्रदान किया, जो मेरी फेलोशिप यात्रा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस दौरान मुझे सीपी (CP) के दो सदस्य मिले, जो 18 दिनों तक मुझे समुदाय के लोगों से मिलने और उनके साथ काम करने में मदद करने के लिए तैयार हुए। उन्होंने न केवल गाँव के मैदान और स्कूल में आवश्यक सामग्रियों का खर्च खुद उठाया, बल्कि मेरे खाने-पीने का भी पूरा ध्यान रखा।

दूसरा गाँव, जहाँ मुझे रहना था, उसके लिए मेरे पास शब्द ही नहीं हैं। आंव बोरोविन, जिला रामगढ़, लगभग साढ़े तीन सौ परिवारों वाला एक समृद्ध गाँव है। यह दामोदर नदी के किनारे बसा एक छोटा सा गाँव है, जिसके पास से नदी बहती है। इटकी के चिनारी से पुरियो (रांची जिले के एक गाँव) की निवासी होने के नाते मेरे लिए गाँव में काम करना असामान्य नहीं था, क्योंकि मैं गाँव में ही पली-बढ़ी हूँ। लेकिन समुदाय में रहकर उनके साथ कार्य करना मेरे लिए एक नया और चुनौतीपूर्ण अनुभव था।

शुरुआत में मुझे रीति-रिवाजों, संस्कृति और भाषा को लेकर थोड़ी असहजता महसूस हुई। यहाँ नागपुरी और खोरठा भाषा बोली जाती है, जो मेरी मातृभाषा से थोड़ी भिन्न थी। इसके अलावा, एक अजनबी के रूप में सुरक्षा को लेकर भी चिंता थी। सौ सवालों के बोझ के साथ मैंने इस यात्रा की शुरुआत की। हमारी संस्था ने हमें मानसिक रूप से तैयार करने और समाज को नज़दीक से समझने के लिए सामुदायिक प्रवास (CP) शुरू करवाया था।

गाँव में 18 दिन बिताने के बाद, अंतिम दिन मैंने महिलाओं के साथ कई पारंपरिक खेल खेले, जिनमें कबड्डी, खो-खो और घड़ा फोड़ शामिल थे। खेल के बाद, महिलाओं ने मुझसे कहा, "आज तुमने हमें बहुत खुशी दी। हमें डर लगता था कि समाज क्या सोचेगा, गाँव के लोग क्या बोलेंगे। लेकिन आज कुछ हद तक हमारे अंदर की बेड़ियाँ टूट गई हैं।" फिर उन्होंने पूछा, "तुम फिर कब आओगी? हमारे साथ खेल कौन खेलेगा?" उनके ये शब्द मेरे दिल को छू गए।

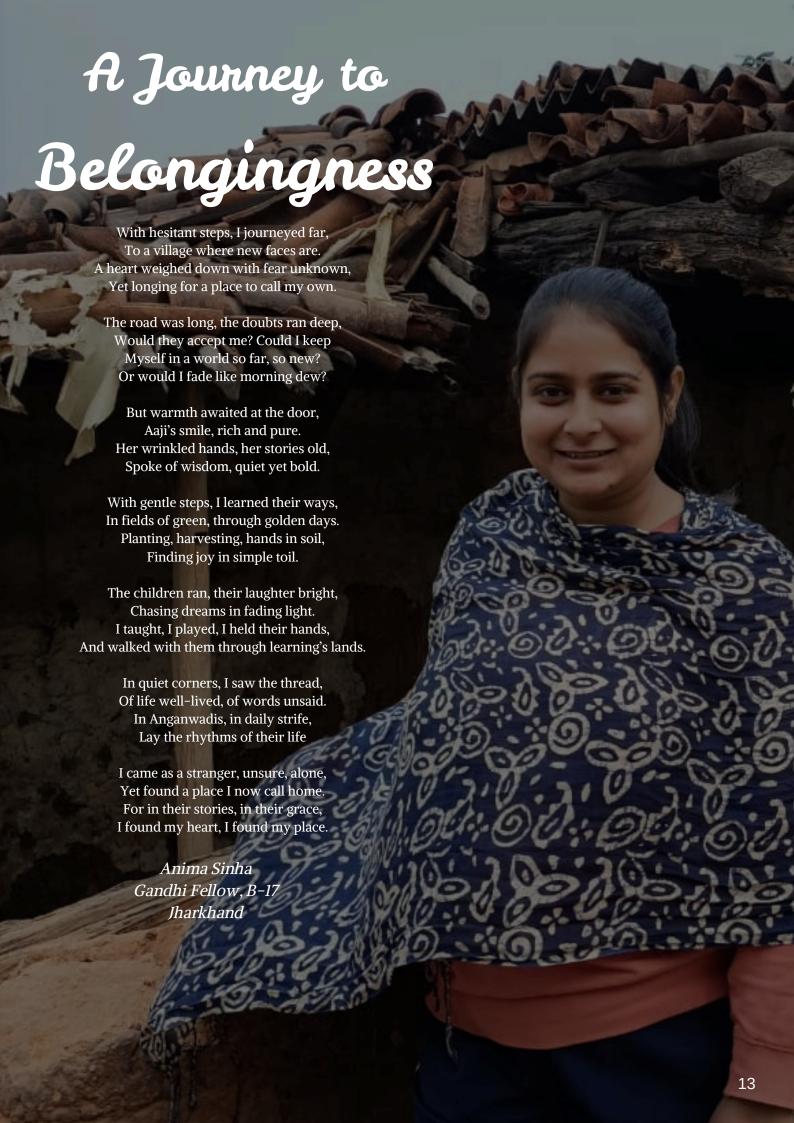
इसके अलावा, मैंने स्कूल में PL कॉर्नर बनाने के लिए हेडमास्टर (HM) से बात की, जिन्होंने इस पहल में मेरा साथ दिया। हालांकि, इस दौरान कई चुनौतियाँ सामने आईं। मुझे लगा था कि आसानी से रंग और अन्य आवश्यक सामग्री मिल जाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हमें बहुत धैर्य रखना पड़ा, क्योंकि हमारे हेडमास्टर जी के पारिवारिक कारणों से कुछ दिक्कतें थीं। बावजूद इसके, उन्होंने हमेशा सकारात्मक सोच के साथ मेरा हौसला बढ़ाया और कहा, "आपका काम जरूर पूरा होगा।" उनके सहयोग से पूरा स्कूल साथ आया, और अंततः मैदान तैयार हुआ। बच्चों के साथ मिलकर हमने खो-खो के लिए पोल भी बनाए।

आज जब मैं पीछे मुड़कर देखती हूँ, तो महसूस होता है कि मैंने सिर्फ एक अजनबी गाँव में काम नहीं किया, बल्कि उसे अपना बना लिया। शायद यह मेरे लिए एक बड़ी सफलता है।

> Gitanjali Kashyap Karuna Fellow, B-6







कठिन

पर

एक या जा

हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले का एक छोटा सा गांव, जहां की संस्कृति और इतिहास बहुत ही समृद्ध है, मुझे हमेशा आकर्षित करता था। यह गांव गड्डी जनजाति से जुड़ा हुआ था, जो अपनी परंपराओं और सांस्कृतिक धरोहरों के लिए प्रसिद्ध है। एक दिन, मैंने निर्णय लिया कि मैं एक महीने के लिए इस गांव में अपनी समुदायिक यात्रा पर जाऊँगा, ताकि यहां के जीवन और संस्कृति को समझ सकूँ।

गांव में पहुंचते ही मैंने एक परिवार के साथ रहने का निर्णय लिया, जिसका मुखिया ट्रक ड्राइवर था। यह मेरे गांव में रहने का दूसरा या तीसरा दिन था। तीसरे पहर कुछ लोग अपनी बकरियों और भेड़ों को जंगल में चराने के लिए ले जा रहे थे। मेरी उत्सुकता मुझसे रोकी नहीं गई, और मैंने उनसे अनुरोध किया कि क्या मैं उनके साथ चल सकता हूँ। वे हंसते हुए सहमत हो गए और मैं उनके साथ जंगल की ओर चल पड़ा।

रास्ते बेहद कठिन थे, और मैं पहले कभी ऐसे रास्तों पर नहीं चला था, इसलिए मुझे बहुत ध्यान से कदम बढ़ाना पड़ रहा था। मैं बार-बार पिछे रह जाता, जबकि लोग अपने हाथ में धारदार हथियार पकड़े चल रहे थे। मैंने उनसे पूछा कि इन हथियारों का क्या उपयोग है, तो उन्होंने बताया कि इनका इस्तेमाल पेड़ों से पत्ते काटने और जंगली जानवरों से बचने के लिए किया जाता है। ये उत्तर मेरे लिए नए थे, लेकिन मैंने इसे समझा और आगे बढ़ते रहे। हम जंगल के अंदर गहरे जा रहे थे। मेरे मन में जंगली जानवरों को लेकर थोड़ी घबराहट थी, लेकिन वहां के लोग अपनी आदतों में व्यस्त थे। जैसे-जैसे हम और गहरे जाते गए, मैंने पत्ते काटने की कोशिश की और फिर उसे पीठ के ऊपर रखकर घर की तरफ चलने लगा। मेरे साथ लोग भी उत्सुकता से कार्य में लगे हुए थे, और धीरे-धीरे सुरज अपनी लालिमा के साथ अस्तांचल की ओर बढ़ने लगा। पत्तों से बना गठूर लेकर आते समय मैंने कहीं जगह पर रुककर आराम किया, क्योंकि रास्ते काफी कठिन थे। इस दौरान एक भेड़ों का झुंड मेरे पास आकर बैठ गया और पत्तों को खाने लगा। यह दृश्य मुझे बहुत शांतिपूर्ण लगा, लेकिन इस दौरान एक बात ने मुझे बहुत परेशान किया- वह थी जानवरों से आ रही तीव्र गंध और इतना बड़ा गठूर लेकर चढ़ना। यह एक नया अनुभव था, जिसे मैंने कभी महसूस नहीं किया था। इस यात्रा ने मुझे बहुत कुछ सिखाया। सबसे पहले, मैंने यह महसूस किया कि किसी भी कार्य को करने के लिए समर्पण और धैर्य की जरूरत होती है। जंगल में चलते हुए, मैंने देखा कि लोग बहुत धैर्य से अपने काम में लगे हुए थे, चाहे रास्ते कितने भी कठिन क्यों न हों। यही समर्पण मझे अपने जीवन में भी अपनाना चाहिए। इसके अलावा, सामहिक कार्य और सहयोग का महत्व भी मुझे समझ में आया। जब हम सब मिलकर काम करते हैं, तो किसी भी कठिन परिस्थिति का सामना करना आसान हो जाता है। यह यात्रा मेरे लिए इस बात का स्पष्ट उदाहरण थी कि एकजुटता में कितनी शक्ति होती है। यह अनुभव यह भी सिखाता है कि संघर्षों और कठिनाइयों का सामना करते समय हमें कभी हार नहीं माननी चाहिए। चाहे रास्ते कठिन हों, या समय कठिन लगे, हमें आगे बढ़ते रहना चाहिए। जैसे-जैसे मैंने इन कठिन रास्तों को पार किया, मैंने सीखा कि हर समस्या के पीछे एक समाधान छिपा होता है, और हर संघर्ष हमें कुछ नया सिखाता है। प्राकृतिक संसाधनों और उनका सम्मान करना भी इस यात्रा का एक अहम हिस्सा था। जंगल में रहते हुए, मैंने देखा कि लोग कितनी सतर्कता से प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल करते हैं और उनका सम्मान करते हैं। यह हमें यह सिखाता है कि हमें अपने प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित तरीके से उपयोग करना चाहिए। यह यात्रा मेरे लिए एक अमूल्य पाठ साबित हुई, जो न केवल मेरे व्यक्तिगत विकास के लिए था, बल्कि मुझे यह भी सिखाया कि कैसे हम अपने सामृहिक कार्यों, संघर्षों और प्राकृतिक संसाधनों के प्रति सम्मान से जीवन में सफलता और संतुलन पा सकते हैं।



Abhishek Gandhi Fellow, B-17 Himachal Pradesh





CI: एक अनजानी राह पर मेरी खूबसूरत यात्रा

यात्राएँ केवल स्थानों का बदलाव नहीं होतीं, वे मन, विचार और आत्मा के बदलाव की कहानी भी होती हैं। मेरी यह यात्रा भी कुछ ऐसी ही थी—एक ऐसी दुनिया में कदम रखने की, जहाँ सब कुछ नया था, अपरिचित था, और कई बार असहज भी। लेकिन इसी अनजानेपन में मैंने खुद को पहचाना, अपनी कमजोरियों से सामना किया और अपने भीतर छुपे नए पहलुओं को जाना।

जब मैंने इस यात्रा की शुरुआत की, तो मन में उत्साह था, पर उतनी ही उलझनें भी थीं। मैं एक ऐसे स्थान पर थी, जहाँ के लोग, संस्कृति और जीवनशैली सब मेरे लिए अलग थे। मैं शुद्ध शाकाहारी थी और मुझे एक मांसाहारी परिवार के बीच रहना था। यह मेरे लिए सिर्फ एक शारीरिक बदलाव नहीं था, बिल्क मानसिक परीक्षा भी थी। मेरे मन में ढेरों सवाल थे—क्या मैं यहाँ टिक पाऊँगी? क्या मैं खुद को इस नए माहौल में ढाल पाऊँगी? लेकिन मेरे अंदर एक उम्मीद भी थी, जिसने मुझे आगे बढ़ने की हिम्मत दी।

"मंज़िलें मिलें या न मिलें, ये तो मुकद्दर की बात है, लेकिन हम कोशिश ही न करें, ये गलत बात है।"

इसी सोच ने मुझे प्रेरित किया, और मैंने तय किया कि चाहे जितनी भी कठिनाइयाँ आएँ, मैं इसे एक अवसर की तरह लूँगी। यहाँ के लोगों के जीवन का हिस्सा बनने के लिए मैंने वे सारे काम किए, जिन्हें मैं पहले कभी नहीं कर पाई थी। गाँव में बकरी पालना, खेतों में धान काटना, जंगल से लकड़ियाँ बीनना—ये सब मेरे लिए नया था। पहली बार जब मैंने अपने हाथों से धान काटा, खेतों में उसकी खुशबू को महसूस किया, तब मुझे एहसास हुआ कि असली जीवन क्या होता है।

इस गाँव में एक सच्चाई से सामना हुआ, जिसने मुझे भीतर तक हिला दिया—नशे का गहरा प्रभाव। मैंने सुना था कि झारखंड में हड़िया नाम की एक चीज़ बहुत प्रचलित है, लेकिन जब मैंने देखा कि यह हर घर में बनाई जाती है और 7 साल के छोटे-छोटे बच्चे भी इससे प्रभावित हो रहे हैं, तो मैं सन्न रह गई। यह सिर्फ एक पेय नहीं था, यह बच्चों के सपनों को धुंधला कर रहा था, माता-पिता और बच्चों के रिश्तों में दरार डाल रहा था, और उनके मानसिक विकास पर गहरा असर डाल रहा था।

मैंने इसे सिर्फ देखा नहीं, बल्कि समझने की कोशिश की—इसका कारण क्या है? इसका असर कितना गहरा है? मैंने अलग-अलग तरीकों से इस पर बातचीत की, लोगों को समझाने का प्रयास किया। धीरे-धीरे, कुछ बदलाव दिखाई देने लगे। यह बदलाव भले ही छोटा था, लेकिन यह मेरे लिए बहुत मायने रखता था।

इस यात्रा ने मुझे खुद को भी समझने का अवसर दिया। मुझे चाय की लत थी, और मैंने सोचा था कि मैं इसे छोड़ नहीं सकती। लेकिन जब मैंने देखा कि 7 साल के बच्चे तक नशे के आदी हो रहे हैं, तो मैंने खुद को चुनौती दी—अगर वे अपने जीवन के इस जाल में फँसे हुए हैं, तो क्या मैं खुद पर इतना भी नियंत्रण नहीं रख सकती? मैंने पूरे एक महीने चाय नहीं पी, और यह मेरे लिए आसान नहीं था। शरीर ने अलग-अलग प्रतिक्रियाएँ दीं, पर मन ने मजबूती दिखाई। यही वह पल था जब मुझे एहसास हुआ कि हम अपनी कमजोरियों पर जीत पा सकते हैं, बस जरूरत है खुद पर विश्वास और धैर्य रखने की। अगर मैं चाय छोड़ सकती थी, तो वे बच्चे भी अपने नशे की आदतों से बाहर आ सकते थे—जरूरत थी सही दिशा देने की।

यह यात्रा मेरे लिए सिर्फ 30 दिनों का अनुभव नहीं था, बल्कि यह एक नया दृष्टिकोण था। मैंने यहाँ सिर्फ गाँव के जीवन को नहीं देखा, बल्कि जीवन की असली सच्चाई को करीब से महसूस किया। मैंने जाना कि बदलाव सिर्फ बड़े स्तर पर नहीं होते, बल्कि छोटी-छोटी कोशिशों से भी बहुत कुछ बदला जा सकता है। यह कहानी है उस "मैं" की, जिसने अपनी सीमाओं को पहचाना, उन्हें तोड़ा और खुद को एक नए रूप में देखा। CI की यह यात्रा मेरे जीवन का एक ऐसा अनमोल अध्याय बन गई, जो हमेशा मेरे साथ रहेगा—मुझे प्रेरित करेगा, मुझे सीख देगा और हर मुश्किल वक्त में मुझे यह याद दिलाएगा कि बदलाव संभव है, बस हमें पहला कदम बढ़ाने की जरूरत होती है।

Sakshi Tiwari Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand

गाँव की यादें

भुभुई के गाँव में, एक नई राह मिली पिरामल फाउंडेशन से, जीवन की सीख मिली

> ईंट बनाने का हुनर सीखा, मछली पकड़ने का जादू भी जानवरों को चराया खेतों में, सब्ज़ियाँ बेचीं हाट में भी

बच्चों के साथ खेले खूब खेल, पढ़ाई में भी दी मदद अपार छात्रवृत्ति की जानकारी दी, खेल-कूद का बनाया आधार

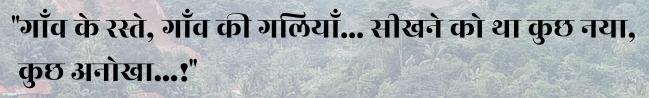
त्योहारों में मिली मिठास गाँव की, जन्मदिन की खुशियाँ भी मनाई पिकनिक पर गए, खाना खाया, गाँव वालों से दोस्ती बनाई

घरवालों और दोस्तों का साथ मिला, हर कदम पर मिली हिम्मत नई भुभुई के इस सफर ने मुझको, जीवन की नई राह दिखाई

> गाँव की मिट्टी की खुशबू में, अपनापन ऐसा मिल गया शहर की चकाचौंध भूल कर, दिल यहाँ का हो गया

Prateek Gandhi Fellow , B-17 Jharkhand





(Rap Style – तेज़ बीट के साथ)
"गाँव की माटी, धान के खेत,
22 लोग, एक ही छत के नीचे रहते,
ठंडी हवाएँ, कुंए का पानी,
पर सीखनी थी सबकी कहानी!"

"पहली सुबह, पहला खेत, आलू, मिर्ची, गोभी के पेड़, खेतों में मेहनत, हाथों में मिट्टी, सपनों की दीवार पे नाम की लिखी इबारत!"

(Hook – मधुर धुन, DJ Remix Touch)
"CI का सफर था अनोखा,
हर दिन था नया, हर काम था रोचक,
स्कूल में सपने, खेल और पढ़ाई,
बच्चों को दिखाया 'I Am Kalam' की परछाई!"

(बीट थोड़ा तेज़—उत्साहित करने वाला मूड!) "गाँव के मेले, त्यौहार रंगीन, मकर संक्रांति से छठ तक थी रीतें हसीन, रसोई में सीखी चूल्हे की आग, महिलाओं की बैठक, सपनों की बात!"

"नदी किनारे कपड़े धोने, जंगल में लकड़ियाँ लाने, बच्चों संग Science Exhibition, Winter Vacation में Library Mission!"

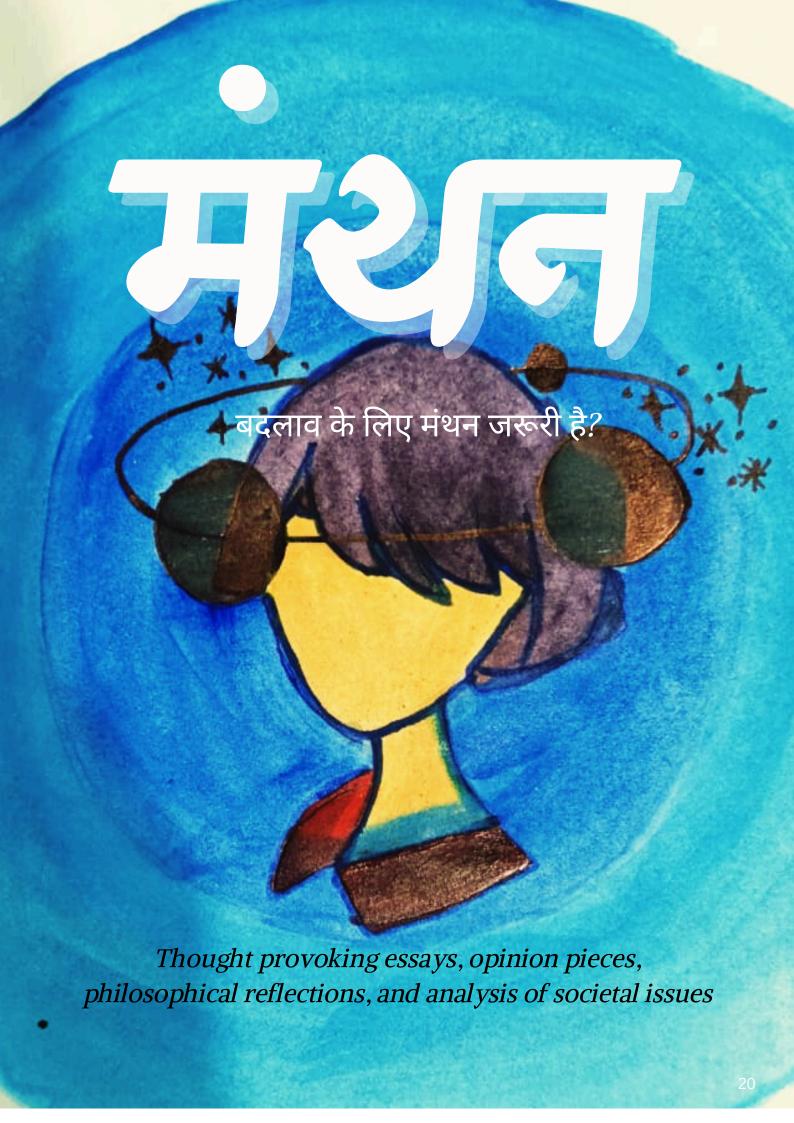
(Hook – DJ Drop के साथ, तेज़ बीट!)

"CI के सफर की है ये बात,
गाँव ने सिखाए नए जज़्बात,
आँखों में सपने, दिल में जुनून,
हर पल सीखा, हर दिन लगा अनमोल!"

(धीमी धुन, इमोशनल टच)
"बाथरूम नहीं था, महिलाओं की थी परेशानी, बात की, समझाया, अब बनने लगी कहानी, संघर्ष किया, पर हौसला बढ़ाया, CI के इन दिनों ने जीवन सिखाया!"

> "गाँव की गलियाँ, खेतों की छाँव, यादें रहेंगी, ये प्यारा सा गाँव, सपनों को लेकर, लौट चले हम, पर दिल रहेगा, उसी गाँव संग!"







As I arrived, the family members eagerly waited to meet me and warmly welcomed me. Thoughts like "How will I adjust here for 30 days?" kept running through my mind. As I arrived, the family members eagerly waited to meet me, welcoming me warmly.

The first three days were extremely challenging. I had to sleep in an unfamiliar place with unknown people, including a male member. Many times, I woke up in the middle of the night, questioning, "What am I doing here?" and wondering what the coming days would be like. In those moments of doubt, I would look at my phone, read messages from others, and find the strength to believe, "I can do this."

Going to school and telling students that I would be coming daily for a month filled them with happiness. Their faces lit up, knowing that for one month, Didi would take them to the ground to play. But this time, they were unaware that Didi would also ask them questions about their future. When I asked them what they wanted to become, there was only silence. Then, one student finally spoke up—not with an aspiration, but with a question:

"Why do we need to study?"

I answered, "For knowledge, and don't you want to roam the world?"

But he replied, "We already learn things normally, so why do we need to study? Why can't we just do business and settle down?"

I paused. I had no immediate answer. Most of the students agreed with him.

During my गाँव दर्शन, I met a little girl who had dropped out of school and was soon going to marry one of my Class 9 students. Her parents were mentally and physically unwell, and because of her property, her in-laws had agreed to marry their son to her. But she wasn't alone.

As part of a winter task, I asked students to survey their village. What we found was heartbreaking—the average age of marriage in the village was just 15.5 years. Dreams were being surrendered at the altar of duty, while the world celebrated women breaking barriers. Here, young girls silenced their aspirations, trading books for burdens, futures for compliance.

After 15 days, I raised this issue in front of teachers and parents during an SMC meeting. I shared my idea of organizing two community events—one to create awareness about child marriage, dropouts, and scholarships, and another to highlight sports opportunities. The community understood and even suggested fundraising for the required resources.

With Team Darha—a group of 12 members (six girls and six boys) from different schools—we collected ₹870 from the villagers. As we continued discussing this issue, I started receiving different perspectives. Some students wanted to study in Hazaribagh, while others didn't want to leave their village at all.

Meanwhile, I grew closer to that little girl. One day, I asked her, "Don't you want to study? Have you never dreamed of becoming something?"

She replied, "Yes, I do. But what about my parents?"

Her father had been missing for two years, and her mother was dependent on her in-laws. At that moment, I realized something-we often complain to our parents about the smallest things, while this little bird had the power to fly as high as she could, yet was being held back. But her sacrifice wasn't due to a lack of ambition-it was for love, honor, and the unyielding grip of tradition.

The last week of my CI journey was the most important. I was preparing to put forth something crucial in front of the entire village at Panchayat Bhawan. Team Darha decided to name the event "सपनों की ओर". Mukhiya Ji, SMC members, teachers, and parents joined us to discuss child marriage and other pressing issues.

Teachers and parents shared their emotions, openly putting their opinions in front of everyone. Students performed a poem and a song, expressing their emotions on this issue. The number of participants wasn't large, but 30–40 members joined us and truly understood. Here, I felt I had succeeded.

During a sports event in Darha, I observed a little girl explaining the meaning of the 'Tree of Hope' to another girl who was going to be married next month. That moment touched me deeply; a little bird, who was once silent, had now become capable of making others understand.

Then, the final day came. The bag that was once full of hope was now a bag full of memories; memories of doing labor jobs with aunty and uncle in the field, laughing and discussing, trying to catch a fish in the river with students, and many more. It made me a different person, not completely, but it taught me how we have to live in the moment and more than I could have ever imagined.

These 30 days were a rollercoaster, an unforgettable journey. I wanted to thank the villagers, my CI family, the teachers, students, and the local governance body for supporting me throughout this journey.

At last, I chose birds to represent these girls because birds symbolize both freedom and captivity. Born to soar, they are often caged, just like these girls, whose dreams are clipped by tradition. Yet, even a caged bird remembers the sky.

Their silence is not surrender - it is a whisper of the freedom they deserve.

True change begins when we recognize their silent struggles, not as distant realities, but as a call to act, to see, to listen, and to fight for a better future.

Madhavi Singh Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand

The Journey of Reflection and Self-Discovery in Gandhi Fellowship

The Gandhi Fellowship is not just another leadership development program—it's a profound journey of self-discovery. Fellows undergo several deeply reflective and immersive processes, such as Community Immersion, Vipassana, and the Private Dream Project. Each of these experiences is designed to push them beyond their comfort zones, challenge their perspectives, enhance self-awareness and trigger reflections that might not be immediate but leave a life-long impact.

Every year, when I introduce Community Immersion to a fresh batch of fellows, I see the same puzzled expressions and hear the same question: "Why is CI part of this fellowship? What is the need to stay with unknown people?" And every year, I give them the same response: "Tell me when we meet at the consolidation. If you don't find the answer by then, I will share". That moment—when they return, with a familiar smile and stories of joyful experiences – is one I deeply cherish.

Then there's Vipassana, a ten-day silent meditation retreat. The idea of complete silence—no talking, no mobile phones, no distractions—terrifies them. Some even ask if they can skip it. But when they return, their reflections are nothing short of profound. They speak of an awareness they never knew they could cultivate, of insights that changed how they perceive themselves. Every time I listen to their experiences, I find myself wishing I had gone through this process too during my fellowship.

The Private Dream Project is yet another challenge—an invitation for fellows to explore their true calling, their Ikigai. Initially, many struggle. I don't know what my private dream is! I'm good at many things—how do I choose just one? But as they navigate through the journey, clarity begins to emerge. Not everyone finds their ultimate purpose, but each fellow takes significant steps towards understanding themselves better. And that, in itself, is invaluable.

Through these reflective processes, the fellows gradually dig deeper into their inner selves along with understanding the society/community/system. It makes them aware of why they do what they do; while this doesn't always lead to immediate change, it serves as a powerful starting point for personal growth. Witnessing these young minds evolve, question, and discover themselves through these experiences is a privilege I feel truly grateful for.

Smita Routh PM,Jharkhand

जिम्मेदारी, असुरक्षा, डर

कब तक बंद रहेंगी ये राहें? कब तक थमेंगी उड़ती बाहें? क्या तोड़नी ज़रूरी नहीं ये बेड़ियाँ? ऐसे कैसे बन पाएंगी बेटियाँ प्रेरणियाँ?!

सुबह-सुबह कानों में एक अजीब-सी आवाज पड़ी— कुड़-कुड़, कुकड़-कू! मैं घबराकर उठी, आंखें मलते हुए चारों ओर देखा और एक पल के लिए तो सांस ही अटक गई— मेरे बिस्तर में ही एक मुर्गा बैठा था! "ये क्या! यहाँ मुर्गा कहाँ से आ गया?" मैं हड़बड़ा कर उठ खड़ी हुई। यह जगह अजनबी थी। कमरे से बाहर आई, तो देखा कि चारों ओर लोग अपने-अपने काम में लगे हुए थे। अजीब भाषा, अनजान लोग, नया माहौल। यह सब देखकर मेरा मन और भी विचलित हो गया। अचानक, एक बूढ़ी दादी की आवाज आई— "बेटा, ब्रश कर लो, फिर खाना खा लो!" मैं चौंकी। इतनी सुबह खाना? हम तो पहले नाश्ता करते हैं! पर यहाँ... यहाँ का हर नियम अलग था। मैं जैसे-तैसे ब्रश कर खाने बैठी, लेकिन थाली में जो कुछ था, उसे देखकर ही मेरा मन घबरा गया। "ये लोग इसे कैसे खाते हैं?" मन में हजारों सवाल उठने लगे यहाँ रहना इतना कठिन होगा, यह मैंने कभी सोचा भी नहीं था। मैं समाज को बदलने, कुछ सिखाने, कुछ सीखने आई थी। लेकिन यहाँ तो खुद को संभालना ही सबसे बड़ा टास्क लग रहा था। गाँव की सच्चाई और मेरा पहला डर समय बीतने लगा। अब मैं गाँव में घूमने लगी, स्कूल जाने लगी, लोगों से मिलने लगी। लेकिन एक दिन दादी ने कहा— "बेटा, स्कूल जाओ, लेकिन गाँव में ज्यादा मत घूमो। तुम हमारी जिम्मेदारी हो।" "क्यों?" मैंने सवाल किया दादी का जवाब था— "क्योंकि तुम लड़की हो। और हमारी जिम्मेदार<mark>ी हो हमें डर है तुम बाहर गई तो मेरे मन में उथल-पुथल मच गई। "पर लड़की क्यों नहीं घूम सकती?" यह एक कड़वी सच्चाई</mark> है -: "हमारी असुरक्षा की वजह कोई जंगली जानवर नहीं, बल्कि इंसान हैं। वो इंसान, जो कब हैवान बन जाए, कोई नहीं जानता।" यह सोचकर मेरा मन भारी हो गया। क्या लड़कियों के लिए हमेशा डर का माहौल ही रहेगा? लेकिन मैंने हार नहीं मानी। धीरे-धीरे गाँव के बच्चे मुझसे घुलने लगे। मैं उन्हें पढ़ाने लगी, और अब गाँव के लोग भी मुझे पहचानने लगे। दादी अब मुझे रोकती नहीं थीं। मैं इस बदलाव से खुश थी, लेकिन गाँव की लड़कियों के मन में बसी "जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर" की बेड़ियाँ अभी भी वैसी की वैसी थीं। नाज परवीन और स्कॉलरशिप की असली कहानी इसी बीच मेरी मुलाकात नाज परवीन नाम की एक लड़की से हुई। उसके घर गई, तो उसकी माँ से पता चला कि उसे सावित्रीबाई फुले स्कॉलरशिप की आखिरी किस्त अभी तक नहीं मिली थी। मैंने कहा— "आप डॉक्यूमेंट दो, मैं कोशिश करूँगी।" लेकिन उनका जवाब सुनकर मैं सन्न रह गई— "बेटा, अगर स्कॉलरशिप मिल जाती, तो जेवर आ जाते। शादी में मदद हो जाती हमारी।"मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि स्कॉलरशिप, जो आगे की पढ़ाई के लिए होती है, यहाँ शादी के लिए ली जा रही है! उनकी सोच मुझे अंदर तक झकझोर गई। मैंने उनसे कुछ नहीं कहा, बस नाज परवीन के डॉक्यूमेंट्स जमा करवाए और उसकी स्कॉलरशिप की प्रक्रिया पूरी करवाई। लेकिन इस पूरी घटना ने मेरे अंदर सवालों का तुफान खड़ा कर दिया।

> "क्या लड़कियों को पढ़ाई सिर्फ शादी के लिए करवाई जाती है?" "क्या उनकी पढ़ाई का कोई दूसरा मकसद नहीं हो सकता?" "कब तक जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर की बेड़ियों में जकड़ी रहेंगी लड़कियाँ?"



असली समस्या—तीन शब्द जो लड़िकयों की ज़िंदगी रोक देते हैं, यह समस्या सिर्फ नाज परवीन की नहीं थी। यह हर लड़की की समस्या थी —मेरी, आपकी, हम सबकी। हर बार जब कोई लड़की अपने सपने पूरे करना चाहती है, तो ये तीन शब्द—जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर— उसके रास्ते की सबसे बड़ी दीवार बन जाते हैं। अगर ये बेड़ियाँ न होतीं, तो आज न जाने कितनी लड़िकयाँ आसमान छू रहीं होतीं। लेकिन इन बेड़ियों ने उन्हें घर की चारदीवारी तक सीमित कर दिया।

क्या अब भी हम चुप रहेंगे?

यह कहानी सिर्फ मेरे अनुभव की नहीं, बल्कि उन लाखों लड़िकयों की है, जो हर दिन इन शब्दों से लड़ रही हैं। अब हमें सोचने की जरूरत है— "क्या हम इन बेडियों को हमेशा के लिए तोड सकते हैं?"

"क्या लडकियाँ बिना डर के सपने देख सकती हैं?"

शायद जवाब इतना आसान नहीं है, लेकिन बदलाव की शुरुआत तो हमें ही करनी होगी। अगर एक लड़की आगे बढ़ेगी, तो उसके पीछे कई और भी चल पड़ेंगी। अब यह हम पर है कि हम डर के साए में रहें या उस डर को हमेशा के लिए खत्म कर दें!

"जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर" की बेड़ियाँ अभी भी वैसी की वैसी थीं। नाज परवीन और स्कॉलरशिप की असली कहानी इसी बीच मेरी मुलाकात नाज परवीन नाम की एक लड़की से हुई। उसके घर गई, तो उसकी माँ से पता चला कि उसे सावित्रीबाई फुले स्कॉलरशिप की आखिरी किस्त अभी तक नहीं मिली थी। मैंने कहा— "आप डॉक्यूमेंट दो, मैं कोशिश करूँगी।" लेकिन उनका जवाब सुनकर मैं सन्न रह गई— "बेटा, अगर स्कॉलरशिप मिल जाती, तो जेवर आ जाते। शादी में मदद हो जाती हमारी।"मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि स्कॉलरशिप, जो आगे की पढ़ाई के लिए होती है, यहाँ शादी के लिए ली जा रही है! उनकी सोच मुझे अंदर तक झकझोर गई। मैंने उनसे कुछ नहीं कहा, बस नाज परवीन के डॉक्यूमेंट्स जमा करवाए और उसकी स्कॉलरशिप की प्रक्रिया पूरी करवाई। लेकिन इस पूरी घटना ने मेरे अंदर सवालों का तूफान खड़ा कर दिया।

"क्या लड़कियों को पढ़ाई सिर्फ शादी के लिए करवाई जाती है?"

"क्या उनकी पढ़ाई का कोई दूसरा मकसद नहीं हो सकता?"

"कब तक जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर की बेड़ियों में जकड़ी रहेंगी लड़कियाँ?"

असली समस्या—तीन शब्द जो लड़िकयों की ज़िंदगी रोक देते हैं, यह समस्या सिर्फ नाज परवीन की नहीं थी। यह हर लड़की की समस्या थी —मेरी, आपकी, हम सबकी। हर बार जब कोई लड़की अपने सपने पूरे करना चाहती है, तो ये तीन शब्द—जिम्मेदारी, असुरक्षा और डर— उसके रास्ते की सबसे बड़ी दीवार बन जाते हैं। अगर ये बेड़ियाँ न होतीं, तो आज न जाने कितनी लड़कियाँ आसमान छू रहीं होतीं। लेकिन इन बेड़ियों ने उन्हें घर की चारदीवारी तक सीमित कर दिया।

क्या अब भी हम चुप रहेंगे?

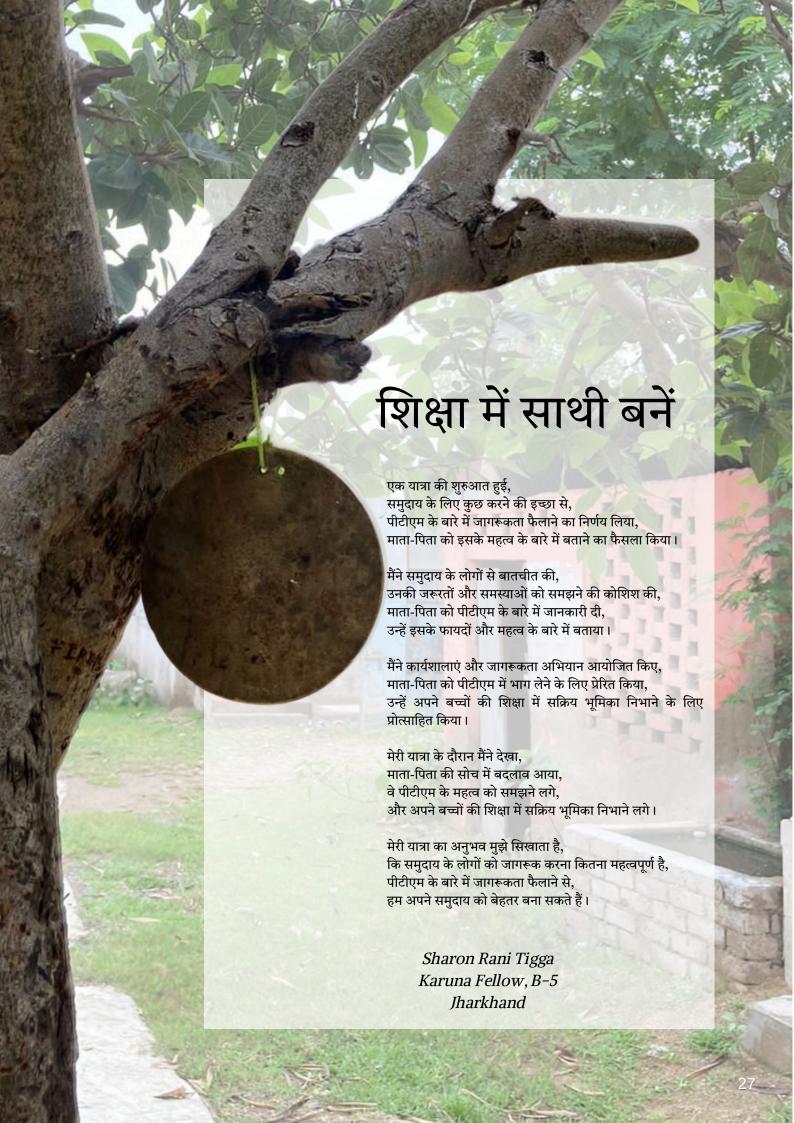
यह कहानी सिर्फ मेरे अनुभव की नहीं, बल्कि उन लाखों लड़कियों की है, जो हर दिन इन शब्दों से लड़ रही हैं। अब हमें सोचने की जरूरत है— "क्या हम इन बेडियों को हमेशा के लिए तोड सकते हैं?"

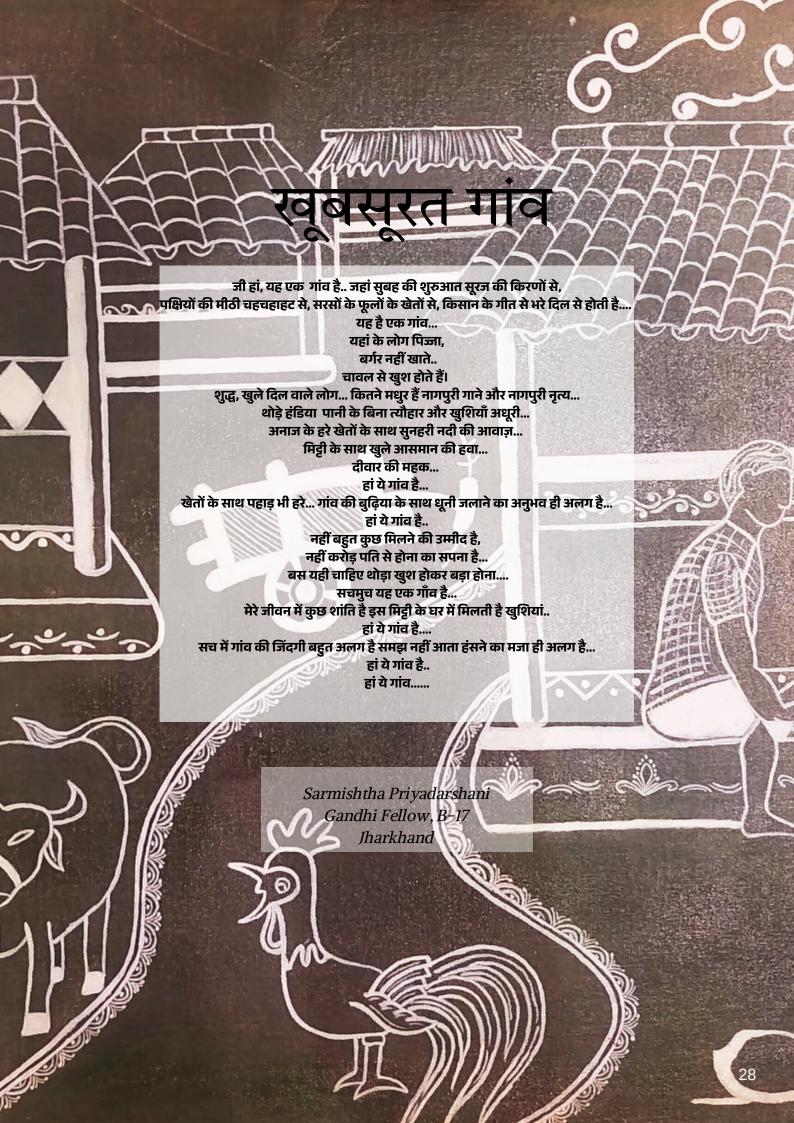
"क्या लडिकयाँ बिना डर के सपने देख सकती हैं?"

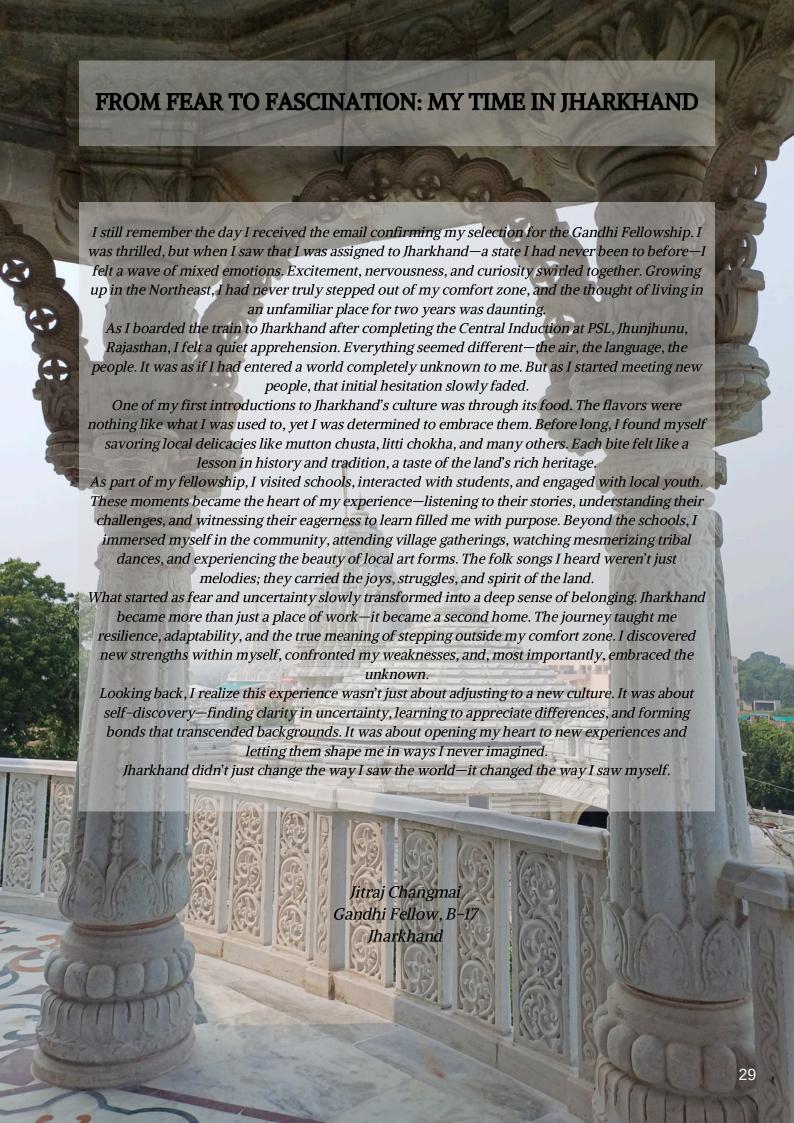
शायद जवाब इतना आसान नहीं है, लेकिन बदलाव की शुरुआत तो हमें ही करनी होगी। अगर एक लड़की आगे बढ़ेगी, तो उसके पीछे कई और भी चल पड़ेंगी। अब यह हम पर है कि हम डर के साए में रहें या उस डर को हमेशा के लिए खत्म कर दें!

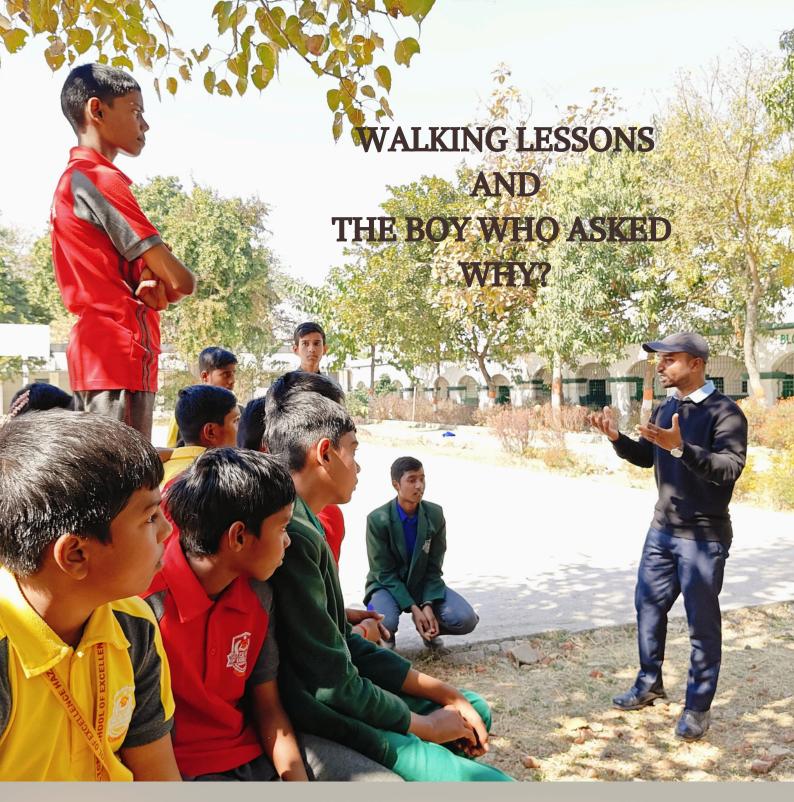
> Sakshi Shukla Gandhi Fellow, B-17 Iharkhand











When I was about to pen down my Private Dream Project —a campaign to promote active living—I hesitated. How do I turn spreadsheets of community engagements, playground conversations, and the sweat of convincing teachers, students, and families to move more into a story? The data was clear: sedentary lifestyles were rising, screens were winning, and my team had rallied hundreds to dance, run, and play. But stories need souls, not statistics. Then I remembered Aditya.

He was 14, sharp-eyed and restless, part of a classroom I'd visited to advocate for daily sports. After my talk, he lingered. "Sir, why do we even go to school?" he asked. "People act like it's the only way to 'become something.' But everything's online now. We just memorize, repeat, forget. What's the point?"

The question hung in the air like a challenge. It mirrored one I'd buried long ago—one that resurfaced as I

The question hung in the air like a challenge. It mirrored one I'd buried long ago—one that resurfaced as I campaigned for active living. Why do we accept so many systems as gospel?

The Maverick's Dilemma

I've always been a questioner. When my PDP began, I assumed the problem was simple: people just needed to move. But the deeper I dug, the more I saw how societal structures—like schooling—shaped inertia. Schools confined kids to desks for hours; communities prioritized jobs that tethered adults to chairs. We'd normalized a life of stillness.

Aditya's question sent me down a rabbit hole. I read policy papers, interviewed educators, and debated philosophers' quotes on "the purpose of education." Most answers felt rehearsed: discipline, employability, socialization. But none explained why we equate learning with confinement. Then I stumbled on a parable:

"If children started school at six months old and their teachers gave them walking lessons, within a single generation people would believe humans couldn't learn to walk without school."

It hit me like a monsoon rain. We'd built a world where curiosity is graded, play is scheduled, and growth is measured in report cards. Schools weren't just buildings—they were metaphors. And my PDP wasn't just about exercise; it was about unlearning the idea that vitality requires permission.

The Soul's Rebellion

I won't lie—this reflection terrifies me. Who am I to question centuries of schooling? Critics will (rightly) argue: schools feed hungry minds, nurture creativity in some, and offer refuge for others. But Aditya's question gnaws at me: Why do we fixate on the system rather than the spirit of learning? Active living taught me this: bodies rebel against cages. So do minds. When I convinced elderly members to participate in our sports day or kids to trade tablets for tag, it wasn't just about health. It was a quiet revolution against the notion that life happens in boxes—classrooms, offices, apps.

Gratitude for the Unanswerable

To Aditya, that boy with the inconvenient question: thank you. You reminded me that inquiry is activism. That "why" can be a battering ram against complacency. I still don't have neat answers. Education matters—but must it demand fluorescent lights and rigid bells? Can't learning be a dance, a sprint, a game where the rules evolve? My PDP journey, it seems, was never just about getting people to move. It was about asking them to rethink movement—of bodies, of ideas, of systems.

So here's to the kids who wonder why. To the mavericks who risk offending. And to the hope that one day, we'll teach walking not through lessons, but by letting feet roam free.

Manish Bharti Gandhi Fellow, B-16 Iharkhand



खुश हूँ

जिंदगी है छोटी, हर पल में खुश हूँ काम में खुश हूँ, आराम में खुश हूँ।

आज <mark>पनीर नहीं, दाल से ही खुश हूँ, आज</mark> गाड़ी नहीं, <mark>पैदल ही खुश हू</mark>ँ।

आज कोई नाराज है, उसके इस अंदाज से ही खुश हूँ।

जिस को देख नहीं सकती, उसकी आवाज से ही खुश हूँ

जिसको पा नहीं सकती, उसको सोच कर ही खुश हूँ।

बीता हुआ कल आ चुका है, उसकी मीठी याद में ही खुश हूँ,

जब आने वाले कल का पाता नहीं, इंतजार में ही खुश हूँ।

हंसता हुआ बीत रहा है पल, आज में ही खुश हूँ जिंदगी है छोटी, हर पल में खुश मैं हूं ..

> Shreya Singh Karuna Fellow, B-6 Jharkhand



Just got off the train,
And here she was again,
In the city known for rains,
Looking for a life free of chains.

She is witty and smart,
With dreams in her heart,
Wishing for a fresh start,
Hoping for destiny to play its part.

Far away from the deafening screams, Wandering around the city of dreams, So damn unreal everything seems, Wondering if it's all just day-dreams.

She is ready for the fight,
Like a bird during its first flight,
Her every goal in her sight,
No wonder her future will be bright.

After many tiring days and nights, In her personal diary, she writes, "All of this seems like godsend. My every dream is a reality in the end."

> Sayli Tichkule Gandhi Fellow, B- 17 Jharkhand



चलो एक बार फिर से खुदकुशी कर लेते हैं, गाँव से थोड़ा इश्क़ कर लेते हैं।

सुना है मैंने, बड़े इत्मीनान से रहने लगे हैं यह<mark>ाँ के ल</mark>ोग, चलो मध्यम सा उनको फिर से बेचैन कर लेते हैं।

अब चालाकियाँ भी करना सीख चुका है मेरा दिल, चलो वैसा ही दिल को थोड़ा मासूम कर लेते हैं। बिछड़ने के बाद गाँव से, बेरुख़ी और नीरसता में घिर गया हूँ, चलो इस पत्थर दिल को फिर से मोम कर लेते हैं।

हुआ था कौन बेव<mark>फ़ा और कि</mark>सने की थी वफ़ा गाँव से, चलो इस बात का फिर से फैसला कर लेते हैं।

हर सवाल का हिसाब–किताब लगाने के लिए, चलो उससे मिलकर जवाब ले आते हैं। चलो एक बार फिर से खुदकुशी कर लेते हैं।

(टिप्पणी: यहाँ "खुदकुशी" का अर्थ स्वय<mark>ं को भूलकर</mark> किसी और में रम जाना है—जैस<mark>े गाँव में जाकर अप</mark>नी परेशानियो<mark>ं को भूलकर</mark> वहाँ के लोगों का हिस्सा बन जाना, उ<mark>नकी त</mark>कलीफ़ों को अपना लेना, और खुद को <mark>नया रूप देना। मा</mark>नो <mark>जैसे आप, आप ख</mark>ुद रहे ही नहीं।)

> Pavan Manvatkar Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand

जरूरत और विलासिता की परिभाषा

गांधी फेलोशिप के दौरान मुझे एक पहाड़ी गाँव में रहने का अवसर मिला। वहाँ एक स्थानीय परिवार के साथ रहकर उनकी जीवनशैली, खान-पान और सोच को समझना मेरे लिए एक अनोखा अनुभव था। यह सब मेरे अब तक के जीवन से बहुत अलग था —साधारण, सादा, लेकिन बेहद गहरा। एक दिन, दिनभर की थकान के बाद जब मैं खाने के लिए बैठी, तो मेरी थाली में गरमा गरम चावल रखे गए। लेकिन यह चावल किसी सामान्य थाली की तरह नहीं थे—उनके साथ केवल उबले हुए चावल का पानी था, जिस पर हल्का तड़का लगाया गया था।

मैं थोड़ा चौंक गई। इससे पहले मैंने कभी ऐसा भोजन नहीं खाया था। मेरे मन में कई सवाल उठने लगे —क्या यह पर्याप्त होगा? क्या यही उनका रोज़मर्रा का भोजन है? लेकिन परिवार की सादगी और प्रेम देखकर मैंने बिना कि सी झिझक के पहला निवाला मुँह में डाल लिया पहला निवाला खाते ही मुझे एक अनोखी संतुष्टि महसूस हुई। स्वाद भले ही साधारण था, लेकिन उसमें एक अजीब-सी गहराई थी। उसी क्षण, मुझे अपने घर की थाली याद आ गई—जहाँ तरह-तरह की सब्ज़ियाँ, दालें और व्यंजन होते थे। हम मध्यमवर्गी य लोग इन चीज़ों को "ज़रूरत" समझते हैं, लेकिन यहाँ, इस पहाड़ी गाँव में, लोगों की ज़रूरतें सीमित थीं, फिर भी वे पूरी तरह संतुष्ट और खुश थे। उस रात, मैंने पहली बार यह महसूस किया कि हम जिन चीज़ों को अपनी आवश्यकता मानते हैं, वे वास्तव में सिर्फ विलासिता हैं। असली ज़रूरत तो संतोष और स्वीकृति में छिपी होती है।

गाँव के इस परिवार के साथ रहते हुए मुझे यह अहसास हुआ कि कम में भी ख़ुशी ढूँढी जा सकती है। यहाँ लोग सादा भोजन करते थे, किठन मेहनत करते थे, लेकिन उनके चेहरे पर हर समय एक शांति और संतुष्टि झलकती थी। उन्हों ने कभी यह शिकायत नहीं की कि उनके पास कम है, बल्कि वे जो भी था, उसी में आनंद लेते थे। इस अनुभव ने मुझे सिखा या कि सच्ची खुशी भौतिक संपत्ति में नहीं, बल्कि आत्म-संतोष और आभार में है। यह पहाड़ी गाँव मेरे लिए सिर्फ एक जगह नहीं रहा, बल्कि यह जीवन के प्रति मेरे दृष्टिकोण को बदलने वाला अनुभव बन गया। मुझे एहसास हुआ कि खुशी उन चीज़ों में नहीं जो हमारे पास हैं, बल्कि इस बात में है कि हम जीवन को किस नज़िरए से देखते हैं और उसकी कितनी कद्र करते हैं। यह यात्रा मेरे लिए केवल एक अनुभव नहीं था, बल्कि "ज़रूरत" और "विलासिता " की सच्ची परिभाषा को समझने का अवसर था —एक ऐसा अवसर, जिसने मेरी सोच और जीवन की दिशा को पूरी तरह बदल दिया

Aparna Pathak Gandhi Fellow, B-17 Himachal Pradesh

WHISPER OF NARGA!

In winter's chill, so deep, so vast, December winds and January's blast. A stranger's step on village ground, New faces met, no warmth was found. Their eyes held doubts, their doors half-closed, Shelter and food? None yet proposed. But words I wove with patient grace, To share my heart, to find my place. I spoke of schools, of dreams anew, Of change that starts with just a few. With each new dawn, their hearts grew wide, And faith in love was revived inside. Through silent nights so cold and bare, I felt the weight of frozen air. Yet kindness bloomed—a dadi's care, With blankets warm and hands to spare. At first, the days were rough, unkind, The unknown pressed upon my mind. But slowly, gently, change took flight, Darkness gave way to morning light. For they saw me, and I saw them, Not as guests, nor mere mayhem. But souls who met in time and space, To share, to heal, to leave a trace. Now Narga lives within my chest, A tale of trials, a love expressed. In simple acts, in bonds so true, I found my home, I grew, I knew

> Aishwarya Yadav Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand



झारखंड के अधिकतर गाँव अभी भी प्राचीन सभ्यता के अनुसार जी रहे हैं। हम जब गांव में भ्रमण के लिए गए तो वहां की महिलाओं को घर से निकलने का मौका नहीं दिया जाता है। पुरुष और महिला को सामान भाव से नहीं देखा जाता हैं। जिसके वजह से अभी भी महिलाओं को बहुत सारी जानकारी का अभाव है

जब मैं गांव की महिलाओं से बातचीत की तो पता चला कि उन्हें खेल में रुचि है लेकिन यहां की बुजुर्ग तरह तरह की बाते करते है अगर महिलाएं खेलने में ध्यान देने लगी तो घर के काम काज कोन करेगा। पड़ोसी क्या बोलेंगे इस बात को लेकर भी बहुत सारी महिलाओं को खेल का अवसर नहीं मिल पाता है।

जब मैं गांव में घूम घूम कर बहुत सारी महिलाओं से बातचीत की तो पता चला कि गांव की जवान महिला खेल के प्रति जितना इच्छुक हैं उतना ही इच्छुक बुजुर्ग महिलाओं में भी देखने को मिला। इससे यह पता चलता है अभी भी गांव के लोग जागरूक नहीं उन्हें गांव के सभी महिलाओं को भी खेल प्रति जागरूक करके खेल का अवसर देना चाहिए।





Mamta Devi Karuna Fellow, B-6 Jharkhand



During my Community Immersion (CI), I discovered the beauty of Sohrai painting, and it was a truly enriching experience. This journey introduced me to a traditional art form that speaks through colors and patterns, telling stories of culture and life. For me, art is more than just drawing, it is a way to express emotions and connect with the world around me. Creating this painting brought me immense joy, as it allowed me to embrace my creativity while honoring the rich heritage it represents. Moreover, engaging with this traditional art form helped me build deeper connections with my CI house members and the children of the village. As I painted, curious eyes gathered around, eager to learn and participate. What started as a personal exploration soon turned into a shared experience, where stories, laughter, and creativity flowed freely. The children, with their innocent excitement, picked up brushes and experimented with colors, while my CI house members appreciated the process, joining in conversations about the significance of Sohrai painting in local culture. Through these moments, I realized that art has the power to bridge gaps, foster understanding, and create a sense of belonging. It was more than just painting—it was about forming bonds, exchanging knowledge, and celebrating the beauty of tradition together.



Amisha Babulkar Gandhi Fellow, B-17 Jharkhand

COMMUNITY IMMERSION

Gateway to Compassionate Leadership

Community immersion is more than an experience—it is a journey of cultivating compassion. As Gandhi Fellows, a young person steps into unfamiliar spaces, they are welcomed by strangers with open hearts. A simple meal shared with warmth becomes a reminder that belonging is not about place, but about connection.

The very first smile and a "Yes", that "you can stay here, this is your house", creates feeling of being cared, loved and sense of safety.

The immersion inspires fellows to step out of comfort zone, and deal with uncertainties, cultivate empathic listening and foster's human connection. Every fellow faces the moment when they wish to return to the familiar, yet they choose to stay. This choice is an act of self-compassion, a commitment to learn, unlearn, and grow.

Living within a community is a journey to move beyond observation and become a part of social fabric, which is new to you. This shared experience that fellows gain, makes a shift from being empathetic leaders to truly compassionate ones. This journey is not just about service, but about partnership—walking alongside communities in a shared pursuit of empowerment.

May it inspire you to see the immersion not just as an experience, but as a way of life—a path to develop deeper connection, and sense of interdependence. Warm wishes.

Eishan Sharma Talent Lead -PSL

COMMUNITY IMMERSION: A JOURNEY OF EMPATHY, LEARNING, AND TRANSFORMATION

In the Gandhi Fellowship program, Community Immersion is not just an experience—it is a profound journey of understanding, connection, and compassionate action. This process enables fellows to step beyond observation and truly live the realities of the communities they serve.

By residing with local families, engaging in daily activities, and witnessing challenges firsthand, fellows cultivate a deep sense of empathy. They move beyond theoretical understanding to direct engagement, where they experience the pulse of grassroots life. This immersive approach allows them to identify problems not as outsiders but as part of the community, leading to insights that are both authentic and deeply human.

Compassion plays a central role in this journey. As fellows live through the struggles and aspirations of the people, they develop solutions that are not just effective but also rooted in care and respect. They recognize that sustainable change comes not from imposing ideas but from co-creating solutions with the very individuals who face these challenges.

More than a learning exercise, Community Immersion is a transformative process—it nurtures resilience, humility, and a lifelong commitment to social change. By fostering compassionate leadership, it equips fellows to design interventions that honour the dignity and strength of the communities they serve.

This experience shapes the fellows not only as changemakers but as individuals who see the world through the lens of interconnectedness, ensuring that every step toward development is taken with both strategy and heart.

RAJENDRA SINGH RAJPUT
PROGRAM MANAGER
SEE LEARNING DDI-JJN -SOESC.

MY EXPERIENCE WITH COMMUNITY IMMERSION

During Gandhi Fellow in Batch 14 during Dec 2021, the community immersion process stood out as one of the most unusual and inspiring experiences of my entire journey. At the start, during orientation, I had many questions—why would anyone agree to host a fellow for a month? How would fellow even find a host family in an entire district, given the one fellow per district working model? And how would he manage without any financial support? I was particularly concerned about the safety and security of female fellows, as they often face additional challenges.

Despite these uncertainties, team decided to go with the flow, and eventually, everyone managed to find a place or family to stay with the help of district and block-level officials. When fellows sought assistance, officials either invited them into their own homes or connected them with their relatives. However, the fellows remained determined and specifically requested to be placed in rural and remotely located village areas for a more authentic community immersion experience.

Cumulatively Fellows shared their experience that low school attendance, many students between the ages of 14 and 16 are forced to work as labourers alongside their parents to help support their households. Additionally, early child marriage remains a pressing issue, with children as young as 12 or 13 being married off, abruptly ending their schooling. The poor state of school infrastructure further discourages learning, as libraries lack proper resources, toilets are either broken or unsanitary, and there are no designated spaces or playgrounds for students to engage in recreational activities. These combined factors create a harsh environment where education is often neglected, limiting opportunities for young learners to build a better future.

Fellows actively conducted various awareness campaigns aimed at educating parents and engaging with key village stakeholders, including the Sarpanch, to advocate for the repair and improvement of infrastructure and essential facilities. Through their dedicated efforts, they successfully established functional libraries by systematically organizing and categorizing books while also mobilizing volunteers to sustain these initiatives.

During my field visit to the fellows' community houses, the most profound realization was witnessing the immense love and affection they received from families—a testament to the deep-rooted pride within our communities. This experience reinforced the belief that community immersion serves as a powerful tool for understanding the essence of Bharat, providing invaluable insights into its social fabric and challenges.



ज्ञान से करुणा तक

सपनों की ध्रप में निखरती उम्मीदें, जहाँ हर बच्चा अपने भीतर एक नया संसार संजोए बैठा है। शिक्षा सिर्फ किताबी ज्ञान नहीं, बल्कि मन, भावना और समाज के साथ जुड़ने की एक यात्रा है जहाँ हर बच्चा अपनी कहानियों के रंग से समाज के कैनवास को सजाने की अनोखी क्षमता रखता है।

"वो इल्म ही क्या जो इंसानियत ना सिखाए, वो तालीम ही क्या जो दिल को ना छु जाए।"

Piramal School of Leadership के बैनर तले, गाँधी फेलोज़ की यह यात्रा, एक बेहतर समाज की ओर बढ़ते कदमों की कहानी है। हमने देखा है कि कैसे दूरस्थ गाँवों के स्कूलों में, बच्चों की मासूम आँखों में सपने जगमगाते हैं। हर छोटी कोशिश, हर सुलझाई गई उलझन, एक नई उम्मीद की रोशनी बनकर उभरती है। जहाँ विश्वास होता है, वहाँ संभावनाओं के फूल खिलते हैं। यह यात्रा ना सिर्फ बच्चों के भविष्य को सँवारती है, बल्कि समाज के हर कोने में आत्मविश्वास और जागरूकता की लौ जलाती है।

गाँधी फेलोज़ एक प्रेरक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हैं, जो सामाजिक भावनात्मक शिक्षण / हर्ष जोहार पाठ्यचर्या के माध्यम से बच्चों के भीतर छुपी संभावनाओं को उभारते हैं। कभी भावनाओं को नाम देने में मदद कर, तो कभी बच्चों को अपनी आवाज़ सुनने के लिए प्रेरित कर। यह प्रक्रिया न केवल बच्चों को भावनात्मक रूप से सशक्त करती है, बल्कि उन्हें जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार भी करती है। जब कोई बच्चा पहली बार अपनी भावनाओं को खुलकर व्यक्त करता है, तो यह एक नए आत्मविश्वास के उदय का संकेत होता है।

सामाजिक भावनात्मक शिक्षण / हर्ष जोहार पाठ्यचर्या जैसे प्रयासों के माध्यम से, गाँधी फेलोज़ ने बच्चों को सिर्फ पढ़ने ही नहीं, बल्कि महसूस करने और व्यक्त करने की कला सिखाने में अहम् भूमिका निभाई है। जब कोई बच्चा कहता है, "आज मैंने अपने दोस्त को गले लगाया क्योंकि वो उदास था..." तो यह छोटे कदम, एक सशक्त समाज की बुनियाद रखते हैं।

गाँधी फेलोज़ की यह यात्रा, केवल आँकड़ों तक सीमित नहीं है, बल्कि हर बच्चे के भीतर छुपे संभावनाओं के बीज को पहचानने की कहानी है। हर एक गाँधी फेलोज़ अपने आप में एक प्रकाश स्तंभ है, जो समाज में समानुभूति, करुणा और बदलाव की नई लहर को जन्म देता है। उनका यह सफर न केवल स्कूली बच्चों की जिंदगी बदलता है, बल्क स्वयं से स्वयं को जानने की यात्रा में हमें भी इंसानियत का असली मतलब सिखा जाता है।

"शिक्षा वही जो आत्मा को रोशन करे, ज्ञान वही जो जीवन को सँवारे।"



पहाड़ों के <mark>बीच</mark> शिक्षा का दीप जलाने वाले एक शिक्षक

यह कहानी एक ऐसे शिक्षक की है, जिसने अपनी लगन, समर्पण और अटूट विश्वास से शिक्षा की रोशनी वहां तक पहुंचाई, जहां इसकी कोई उम्मीद तक नहीं थी। यह कहानी विनोद राम की है, जो झारखंड के लोहरदगा जिले के ग्राम बसर टोली के निवासी हैं। आर्थिक रूप से कमजोर परिवार से आने वाले विनोद राम के माता-पिता किसान थे, और परिवार की स्थिति इतनी खराब थी कि उनकी बहनें शिक्षा से वंचित रह गईं। लेकिन विनोदराम ने हार नहीं मानी और न केवल खुद शिक्षक बने बल्कि अपने छोटे भाई को भी शिक्षा के क्षेत्र में लेकर आए।

शिक्षक बनने की यात्रा और चुनौतियाँ

27 जुलाई 2000 को उनकी नियुक्ति राजकीय प्राथमिक विद्यालय, डूमर पाठ, किसको प्रखंड, लोहरदगा में हुई। यह नियुक्ति किसी साधारण स्कूल में नहीं, बल्कि एक ऐसे स्थान पर हुई थी जहाँ कोई भी शिक्षक ज्यादा दिनों तक टिक नहीं पाता था। इससे पहले कई शिक्षक यहां नियुक्त हुए लेकिन वे जल्द ही स्थानांतरण करवा लेते थे।

जब विनोद राम पहली बार स्कूल पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि यहाँ केवल आदिम जनजाति (असुर) के लोग रहते हैं। उनका जीवन बेहद कठिन था—रहन-सहन, खान-पान और सोच-विचार, सब कुछ बिल्कुल अलग। सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि बच्चे स्कूल आते ही नहीं थे। वे उन्हें देखकर भाग जाते थे। स्कूल तो दूर, गांव में भी शिक्षा का कोई माहौल नहीं था।

संघर्ष और संकल्प

यह इलाका पहाड़ी था, जहां पहुंचने का कोई सुव्यवस्थित रास्ता नहीं था, न बिजली थी, न पानी, और न ही परिवहन की सुविधा। किसी तरह ट्रकों से आना-जाना शुरू किया, लेकिन जब ट्रक बंद हो जाते तो 10 किलोमीटर पैदल जंगल और पहाड़ पार कर विद्यालय पहुंचना पड़ता। कई बार स्कूल पहुंचने के बाद यह पता चलता कि कोई भी बच्चा नहीं आया—सब अपने पशु चराने चले गए। कई महीने तक यह सिलसिला चलता रहा, लेकिन विनोद राम ने हार नहीं मानी। वे गांव-गांव जाकर अभिभावकों को समझाने लगे कि शिक्षा क्यों ज़रूरी है। धीरे-धीरे बच्चों और अभिभावकों का भरोसा जीतने में सफल हुए।

2006 से 2018: एक शिक्षक, एक स्कूल

2006 में उनके सहयोगी शिक्षक का ट्रांसफर हो गया। अब पूरी ज़िम्मेदारी अकेले विनोद राम के कंधों पर थी। कक्षा 1 से 8 तक अकेले पढ़ाना किसी चुनौती से कम नहीं था। लेकिन उन्होंने इसे भी स्वीकार किया।

उन्होंने बच्चों को इ<mark>तनी अनुशासन और ज़िम्मेदारी सिखाई कि उनके स्कूल पहुंचने</mark> से पहले ही बड़े बच्चे छोटे बच्चों को पढ़ाने लगते, प्रार्थना करा लेते और कक्षाओं <mark>की सफाई कर लेते। यह सब उन्होंने अपने</mark> दृढ़ निश्चय और समझदारी से संभव किया।

परिणाम: शिक्षा की रोशनी

जब विनोद राम वहां पहुँचे थे, तब इस क्षेत्र में एक भी बच्चा मैट्रिक पास नहीं कर पाता था। लेकिन आज, उनकी मेहनत से 40-50 छात्र मैट्रिक, इंटर और स्नातक पास कर चुके हैं और कई सरकारी व निजी नौकरियों में कार्यरत हैं।

आज इस स्कूल में 130 बच्चे नामांकित हैं, और कई बच्चे 5-7 किलोमीटर पैदल पहाड़ चढ़कर स्कूल आते हैं। शिक्षा के प्रति यह जागरूकता विनोद राम के कठिन परिश्रम का ही परिणाम है।

सिर्फ शिक्षक नहीं, समाज सुधारक भी

उन्होंने शिक्षा तक सीमित न रहते हुए समाज सुधार का भी बीड़ा उठाया। हर रविवार को बच्चों के लिए क्विज प्रतियोगिता आयोजित की, जिसमें प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया जाता। उन्होंने गांव के लोगों को अंधविश्वास, नशापान, गरीबी और अशिक्षा से लड़ने के लिए जागरूक किया।

आज भी, 25 वर्षों के बाद, सड़कें बदहाल हैं, बिजली की स्थिति जस की तस है, लेकिन विनोद राम का प्रयास जारी है। वे अपने छात्रों और गांव के लोगों के लिए पुराने कपड़े और साड़ियां लेकर आते हैं ताकि उनका जीवन थोड़ा बेहतर हो सके।

अंत में.....यह सिर्फ एक शिक्षक की कहानी नहीं है, बल्कि यह संघर्ष, समर्पण और बदलाव की कहानी है। यह दिखाती है कि अगर एक शिक्षक ठान ले, तो वह पूरे समाज को बदल सकता है। विनोद राम ने न सिर्फ बच्चों को शिक्षा दी, बल्कि एक पूरे समुदाय को अज्ञानता के अंधकार से ज्ञान की रोशनी तक पहंचाया।

यह कहानी उन सभी शिक्षकों के लिए प्रेरणा है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी शिक्षा का दीप जलाने का साहस रखते हैं।

Puja Nikam Gandhi Fellow, B- 17 Jharkhand

भारत को बनाना है, तो भारत को जानो तो सही...

Community immersion या कहे सामुदायिक अभिसरण is an integral part of Gandhi fellowship at Piramal Foundation wherein incoming batch of Gandhi Fellows spend 1 month living in a community in rural India. Post this, they begin their Live Action Projects.

What makes it challenging is the following- they have to find a home/host on their own who will provide them with space and food in their homes, they have to live with minimum cash during this period and they must pitch in all labour jobs the host family engages in.

Along with this, they must do a community mapping to understand what social problems that milieu have, what mindsets they operate with, what is their life like, what are their aspirations, how are the children, etc.

Why is Cl important? For one, it builds their understanding of rural India. More importantly, it builds their "self". As one of the fellows put it succinctly in her poem on CI, Anu Priya, "CI का मक्सद पूछो तो खुद को तराशना बताते है "

How does that happen! Read on to know...

I recently came back from Dharamshala, Himachal Pradesh where I led a 2 days Cl consolidation process for our HP fellows. Large part of Day 1 was listening, probing, asking questions, helping fellows unpack their learnings. Here are some of the experiences they shared: a fellow, Krishna shared how she had to stay in a "गौशाळा" for two days, another abhishek shared how he built his physical resilience through taking heaps of grass up the hilly area, how he learned to be comfortable with the "gandh" of sheep, yet another fellow aparna talked about how eating rice and maand (rice ka chaunka hua paani) felt fulfilling after a days work, yet another Jagan shared how his mental resilience got build up through taking a series of 'no's" before he got a host home.

These experiences were deeply transformative for all them- they deconditioned them, they experienced compassion from strangers, they built their humility, their appreciation for "भौतिक संसाधन" and natural resources, their confidence of adapting to any circumstances and most importantly these experiences helped them discover their inner strengths.

CI in a Gandhi fellows journey is an inflection point-there is GF before Cl and GF after CI. Their stories of communities were equally insightful- one of the fellows discovered how children of the village were glued to Pubji on the phones, other fellow discovered how women did not have azaadi to dry their underclothes on the terrace, a few of them realised how difficult it is to navigate conversations with गांव प्रधान and get them to change behaviours, they got present to the addiction problems of youth of the village and many more nuggets like these..

My personal take is Cl process serves as MIRRORS and WINDOWS for fellows.

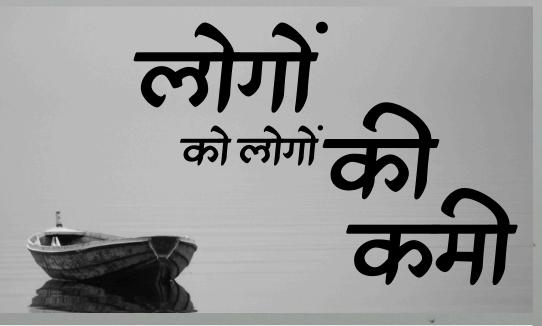
Maulshree Kalothia Program Director Himachal Pradesh मेरी खुशी का ठिकाना नहीं था, क्योंकि आखिरकार मुझे सीआई के लिए घर मिल गया। मुश्किलें तो बहुत आईं, पर अंत भला तो सब भला। एक महीने का सामान लेकर मैं आंटी के पीछे उनके घर की तरफ चल पड़ी। मन में बहुत सारे सवाल उमड़ रहे थे घर कैसा होगा, मैं कैसे रहूंगी? पर एक चीज जो मैंने अपने मन को समझा ली थी कि मैं उस घर में बेटी की तरह रहूंगी।

घर में बस दो लोग रहते थे आंटी और उनकी बहू। बेटा केरल में नौकरी करता था और साल में बस एक बार आता था। यह वाक्य दूसरी रात का है, रात का खाना खाने के बाद आंटी ने मुझे कहा, "चल, तुझे भैया की शादी की वीडियो दिखाती हूं।" हिमाचली शादी देखने का यह मौका में भी गंवाना नहीं चाहती थी, तो मैं भी खुशी से उनके पीछे चल पड़ी।

एक जगह पर मैंने देखा कि आंटी रो रही थीं। मैंने हसकर पूछा, "आंटी, आप तो बहू ला रही हैं, फिर आप क्यों रो रही हैं?" आंटी की आंखें डबडबा गईं, मायुसी भरी आवाज में उन्होंने कहा, "तेरे अंकल नहीं हैं ना, बेटे। मुझे उनकी याद आ रही थी।"

मैं खामोश हो गई, क्योंकि इस दर्द से तो मैं वाकिफ थी मां की आंखों में जो देखा है। इस बात का मुझे एहसास था कि कुछ दर्द कभी कम नहीं होते, बस उन पर समय एक चादर डाल देता है। आप उस दर्द को कम या खत्म कभी नहीं कर सकते, बस उस पर प्यार से हाथ फेर सकते हैं। आराम बस उसी से मिलता है।

वीडियो खत्म होने के बाद मैंने आंटी का हाथ अपने हाथ में लिया और उनकी नम आँखों में देखकर पूछा, "आंटी, आपको आज भी अंकल की कमी उतनी ही गहरी महसूस होती है?" आंटी ने सिसकती आवाज में कहा, "बीते बीस सालों में ऐसा कोई दिन नहीं है जब उन्हें अंकल की याद न आई हो।" मैंने उनके हाथ को थामे रखा, ताकि उन्हें यह एहसास हो कि मेरे पास उन्हें सुनने के लिए भरपूर समय है।



उस रात आंटी ने मुझसे अपने अंदर दबी कितनी भावनाओं को साझा किया, बीते बीस सालों में कितनी मुश्किलों और परेशानियों के बाद भी उन्होंने हार नहीं मानी और अपने दम पर अपने बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा किया। एक पल को मुझे ऐसा लगा जैसे मैं अपनी मां को सुन रही हूं। आंटी की आंखों में बहती भावनाओं का मुझे समुंदर दिख रहा था, जिसमें खुशी, गम, ताकत सब थे।

इस पूरे समय मैंने आंटी का हाथ नहीं छोड़ा। अंत में उन्होंने मुझे कहा, "काफी देर हो गई, बेटे, अब तू सो जा।" मैंने उन्हें बिना कुछ बोले गले से लगा लिया। वो मेरी पीठ सहलाने लगीं जैसे कि मेरा शुक्रिया अदा करना चाह रही हों।

उस पल मुझे यह एहसास हुआ कि आज के जमाने में पैसों और खाने से ज्यादा लोगों को लोगों की कमी है। उस रात में काफी देर तक सोच रही थी, बिहार से आई मैं हिमाचल के किसी कोने में किसी अनजान से घर में जाकर किसी के दर्द का मरहम बन जाऊंगी, ये कब मैंने सोचा था। मैं मन ही मन गांधी फेलोशिप का धन्यवाद कर रही थी कि मुझे न सिर्फ यह मौका मिला कि में आंटी के दर्द को अपना पाऊं, बल्कि यह समझ पाऊं कि पैसों से ज्यादा कीमती है किसी को अपना समय देना। आज करुणा की इतनी कमी हो रही है कि न ही इंसान के पास समय है किसी और के दर्द को सुनने का न अपने साझा करने का। भावनाओं को लोगों ने इस कदर जकड़ रखा है कि वो खुलकर सांस भी नहीं ले पा रहे।

मुझे उस पल यकीन हुआ कि शायद मेरा उस समय उस पल में रहना नियित थी, पर एक ऐसे इंसान ज़रूरत सभी को है। उस रात के बाद मैं आंटी के लिए बेटी बन गई, अब उनकी आंखों में मैं अपने लिए वो प्यार देख पाती हूं जो सिर्फ अपनी मां की आंखों में देखा है। आज के ज़माने को जब मैं खामोश रहकर देखती हूं, जहां हर कोई सर झुकाकर अपने फोन में मिलो दूर बैठे किसी से बात कर रहा, पर कोई भी नज़र उठाकर ये क्यों नहीं देखता कि कितने लोग चुपचाप उनके बगल में बैठकर इंतज़ार कर रहे उनके नज़र उठाने का और कुछ उनके दिल की सुन जाने का।

इस पल में मुझे एहसास हुआ कि ज़िंदगी में हमें एक दूसरे के साथ जुड़ने की ज़रूरत है, एक दूसरे की बात सुनने की, एक दूसरे के दुख-दर्द को समझने की। अगर हम ऐसा करेंगे, तो हमारे आसपास की दुनिया भी बदल जाएगी।

> Anu Priya Gandhi Fellow, B-17 Himachal Pradesh

THE SILENT STRUGGLES

During my Community Immersion (CI), I witnessed the widespread practice of polygamy in the community, a reality that deeply shaped the lives of many women. Among them, second wives bore the heaviest burdens, often living in the shadows of their husbands' first families, their struggles unseen and unspoken.

> One woman's story stood out. She had entered a home where she was always second—never the priority, never truly belonging. Emotional neglect and financial insecurity defined her existence, leaving her to navigate a life of quiet endurance.

The first wife had four sons and a daughter, two of whom were

already married. Meanwhile, the second wife's daughter a bright, eager girl was often overlooked. Education was not a priority for her, and societal constraints further

> dimmed her chances of a different future. Despite her potential, opportunities remained scarce.

With a quiet determination, the mother shared her deepest hope: that her daughter would not suffer the same fate. She longed for dignity, for recognition-not just for herself, but for her child.

> Her story was not unique. Many women in the community found themselves trapped in similar circumstances; bound by traditions they had limited power to challenge. Yet, even in their silent struggles, there was resilience—a flicker of hope that, one day, their daughter might break free from the cycle they had endured.

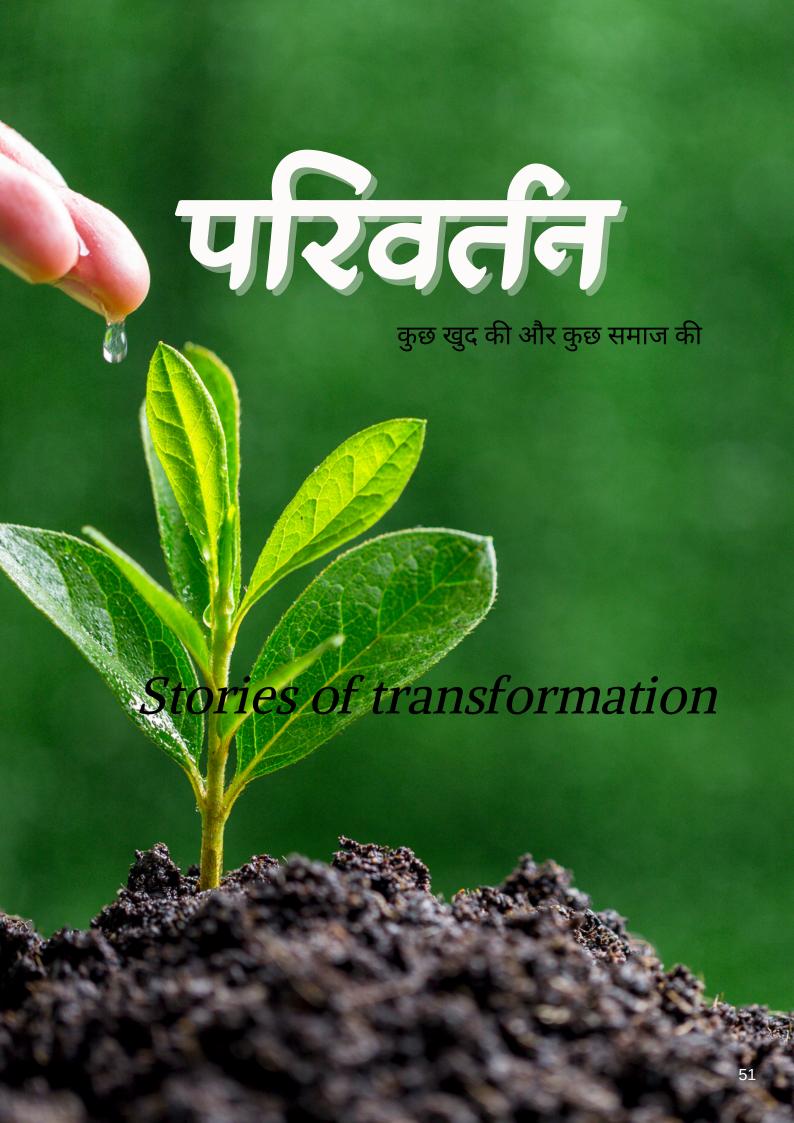
> > Shahreen Fatima Gandhi Fellow, B-17







Anis Kumar Gupta Gandhi Fellow, B-17 Bihar



A LIBRARY THAT
BREATHED AGAINA STORY OF CHANGE

In a quiet village of Bihar, where the rustling of leaves and the occasional hum of passing bicycles filled the air, an old library stood—its doors locked, its shelves coated in dust, and its purpose nearly forgotten. Once a thriving center of learning, it had been reduced to a relic of lost potential. The villagers barely noticed its presence anymore, as if they had accepted that books no longer held a place in their daily lives. When I first arrived in the village for my Community Immersion, I was searching for something meaningful to contribute—a project that could leave a lasting impact. That's when I discovered the library. The moment I saw the locked doors and the cobwebbed windows, a thought struck me: What if this place could be brought back to life?

A Dream Meets Reality

Determined, I began asking questions. The elders shared nostalgic stories of how the library was once a pride of the village, where children gathered after school, and elders read newspapers together. But over time, due to neglect and lack of funds, the doors were shut, and no one tried to reopen them.

The more I listened, the more I realized that this wasn't just about books—it was about reviving a culture of learning. But as I started discussing the idea of reopening the library, I was met with resistance.

"Nobody will come even if you open it," some said.

"Who reads books anymore? Everyone is on their phones now," others argued.

The biggest challenge, however, was sustainability. Even if I managed to reopen the library, how could I ensure that it wouldn't shut down again after I left?





From Resistance to Hope

I knew I needed more than just enthusiasm—I needed partnerships. After multiple conversations, I connected with a local NGO working in education. They had books and resources but lacked a dedicated space in the village. A potential solution had emerged. If the village provided the space, the NGO could supply the materials.

But convincing the village authorities was another battle. The panchayat mukhya was initially hesitant. "Who will be responsible for it?" he asked. That's when I proposed a long-term commitment: an agreement between the NGO and the village's Library Committee members, ensuring that for at least seven years, the library would remain open.

After weeks of discussions, negotiations, and persistent efforts, the bond was finally signed. The library was no longer just my initiative—it was a shared responsibility.

The Transformation Begins

With the agreement in place, we began the real work. The first step was clearing out years of dust and decay. I, along with some villagers, swept the floors, cleaned the shelves, and fixed the broken furniture. The carpenter from the village came forward to restore the doors of library. A local shopkeeper donated a fresh can of paint. The once-dead space was slowly coming back to life.

Looking Ahead

The repairs are still ongoing, but the vision is clear. Soon, the library won't just house books—it will have computers, allowing children to explore digital learning. Volunteers will visit regularly to guide students, helping them with their studies and career aspirations. This place will no longer be forgotten. It will be a living, breathing center of knowledge.

As I stand in front of the library today, watching the repairs progress, I realize that this project was never just about opening doors. It was about changing mindsets, about proving that forgotten spaces can be revived, and about ensuring that opportunities don't disappear with time.

The journey isn't over, but the foundation has been laid. And this time, the doors will not close again.

Shruti Kannaujiya Gandhi Fellow, B-17 Bihar

एक कदम परिवर्तन की ओर

सुनो सुनो भाई बात सुनो, पालू गांव का राज सुनो। जहां के लोग है सच्चे और दिल के अच्छे।

नई गलियां जब देखी पहली, मन में हल्की हलचल चली। पर बच्चों ने जब हाथ बढ़ाया, दिल को थोड़ा सुकून आया।

FGD के लिए लोग जुटाने, था मुश्किल पर हार न माने। बच्चों संग हमने ठाना, गांव मे FGD कराना।

बातों-बातों में जाना हमने, क्या था लोगों का सोचना। लोग थे कुछ सीखने को तैयार, पर वो थे 3R से अनजान।

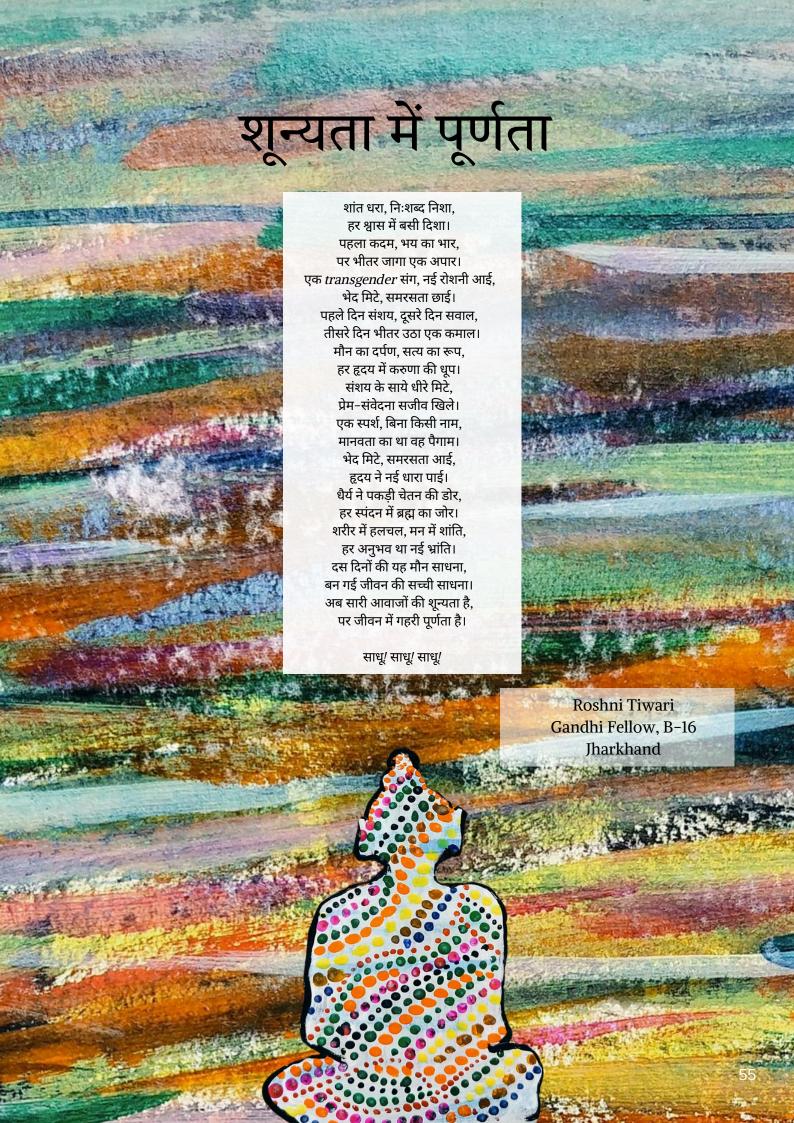
पहले लोग थे दूर भागते, समय देने में हिचकिचाते। फिर आया वो सुहाना पल, सवालों की बरसी थी हमने ठानी नई राह बनाएंगे, ईको ब्रिक हम सब बनायेंगे। बच्चों संग जब हाथ मिलाया, अपने डर को दूर भगाया।

स्वयं सहायता समूह भी आगे आई खूब बढ़ चढ़कर भाग लिया। कचरे को जब भरते गए, नया एक निर्माण कर गए।

बच्चों ने मुझे गांव घुमाया बड़े बुजुर्ग ने गांव समझाया। हाथ में कलम लेकर मैप बनाया पालू गांव का मैप समझाया।

कम्फर्ट जोन से बाहर आकर, सीखा जीवन का नया आधार। पालू गांव की ये जो कहानी, सिखा गई हमें नई पहचान।

Anupama Lakra Karuna Fellow, B-6 Jharkhand



Beyond Caste: A Story of

Persistence and Change

Before I embarked on my Community Immersion journey, a lingering question hovered in my mind: Will the people accept me for who I am? Would my identity—my roots as an Adivasi, my background, and my cultural heritage—be a barrier or a bridge? These uncertainties accompanied me as I stepped into Mohiuddinpur, ready to begin an experience that would challenge my perspectives and shape my understanding of social acceptance.

The moment I arrived, the first question I heard was not about my name, purpose, or aspirations. Instead, it was, "Aap kis caste se belong karte hain?" As if my worth was inherently tied to my caste. As if my identity needed validation through a social structure that I had never used to define myself. At that moment, I realized that my journey was not just about learning and contributing to the community but also about confronting an ingrained mindset that dictated social interactions.

My first day in the village was overwhelming. When I stepped out of my CI house, I felt like I had entered a different world—one where everyone seemed to carry an invisible scale, weighing people's worth based on their caste identity. As I ventured into the community, attending SHGs meeting with Jeevika (CM) and interacting with the local women, I noticed an intriguing pattern. Initially, they welcomed me warmly, fascinated by the fact that I had traveled from a different state to be among them. Their eyes held curiosity, and their voices carried respect. But the moment I answered their inevitable question—Aap kaun jat se ho?—the atmosphere would shift.



"I am from a Tribal community," I would say, only to be met with silence, awkward glances, and a subtle but noticeable change in their demeanour. The warmth would fade, the admiration would dim, and a strange hesitancy would replace their initial enthusiasm. I saw it in their eyes—the stereotypes, the prejudices, and the unspoken judgments that years of social conditioning had ingrained in them. It was disheartening, yet I was determined not to let these barriers define my experience. I decided to

It was disheartening, yet I was determined not to let these barriers define my experience. I decided to confront this bias, not with anger or resistance, but with patience and persistence. I made a conscious effort to engage with the community, not just as an outsider seeking acceptance, but as one of them—someone who genuinely cared about their struggles, their aspirations, and their progress.

I continued attending meetings, participating in discussions, and offering my insights wherever possible. Slowly, I became more than just an identity defined by caste. I became a person with a purpose, a contributor, a friend. The women who once

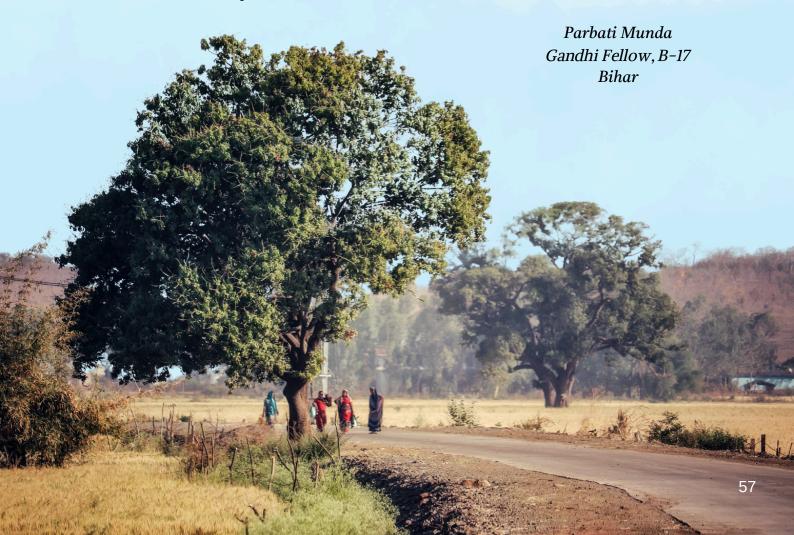
hesitated to interact with me began to seek my advice. They started acknowledging my efforts rather than my background.

Over time, the walls of hesitation crumbled. The same women who once gave me weird looks now invited me into their homes for tea, shared their stories with me, and even sought my opinion on their Jeevika projects. They started seeing me not as a Tribal outsider but as a fellow human being with shared emotions, dreams, and struggles.

This transformation didn't happen overnight. It took consistent effort, resilience, and a belief in the power of change. It made me realize that prejudice is not permanent—it is learned, and therefore, it can be unlearned.

My journey in Mohiuddinpur was more than just a community immersion experience. It was a lesson in perseverance, in breaking social barriers, and in proving that acceptance is not demanded—it is earned through understanding, empathy, and genuine human connection.

As I reflect on this journey, I no longer carry the question of whether people will accept me. Instead, I hold a deeper realization: Change begins when we choose to stand firm in our identity while opening our hearts to others. I stepped into Mohiuddinpur as an Adivasi outsider, but I left as someone who had sown the seeds of acceptance—one interaction at a time.



JOURNEY OF CHANGE

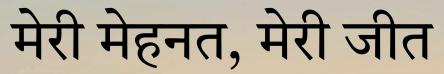
Jharkhand has long been a land of sporting legends, producing icons like Jaipal Singh Munda, Deepika Kumari, M.S. Dhoni are a few from the list. But beneath this rich history lies a question that often goes unanswered—do all children, especially girls, have the right to play? When I first arrived in Bongahara for my community immersion, I had so many questions in my mind. But as soon as I stepped into my new home, all my worries slowly faded away. From the very first day, I became part of their daily life—helping in the fields, carrying water from a well 1.5 km away, and feeding the cattle. Carrying those heavy pots of water made me realize how strong these women were. They never complained, never hesitated. Their life was tough, yet they moved forward every single day. At the school, I started adding small activities to the morning assembly—fun exercises and games to keep the children active. I also helped them understand scholarships and how they could apply.

Slowly, I saw a change. The children became more interested, more confident. With the teachers, we worked on making Parent–Teacher Meetings (PTMs) more engaging. We organized activities for parents so they would participate, and soon, more parents started attending.

Every evening, I explored the village, meeting people, listening to their stories. I heard how they lived, how things had changed over time. I started Zumba classes, where children and even a few women joined. This gave me an idea—I needed to do something for the women here. I went to the Self-Help Group (SHG) meetings, where more than 40 women gathered. I listened to their struggles. Most of them had no source of income apart from farming. They wanted to do something for themselves, but society had set invisible boundaries for them. Many were not allowed to step outside their homes for anything other than household work. That's when I suggested a community event. We spoke about gender equality, the importance of education for girls, and women's empowerment. But the most special part, we played Kabaddi. At first, the women hesitated. "We haven't played since childhood," they said. But as the game began, something changed. They laughed, they cheered, they ran across the ground without fear. "I haven't laughed like this in 20 years," one woman told me.

That day, Kabaddi was not just a game—it was freedom. It was a reminder that they are more than just wives or mothers. They are individuals who deserve joy, confidence, and space to be themselves. The impact didn't stop there. The women decided to make Kabaddi a regular activity. Rani, who was once shy, now dreams of becoming a police officer. Even her mother wants to start working with other women to earn a living. In those 30 days, the village may or may not have changed—but I did. I became more patient when things didn't go as planned, more confident in my ability to connect with people, and more aware of what real change looks like. I learned that solutions don't come from me but from the people themselves—I just need to listen, guide, and stand with them. The biggest shift? I no longer see problems. I see







एक खामोश जीत

Have you ever asked yourself these questions: Where are you going? Why are you here? Have you truly been sincere when seeking the answers? And have you ever wondered — Who will remember you? Will anyone sing about you when you're gone? Are you worth it? Did you put in enough work? These questions have often echoed in my mind, especially because I am someone who goes full throttle on a task if I genuinely believe in it. Today, I want to share a story that left a lasting impact on me.

It was mid-July when I met the protagonist of this story, a young boy named Chandan. At first glance, Chandan appeared meticulous, but once you got to know him, he was wayward and mischievous — the kind of person we all seem to have encountered at some point.

At the time, I was working on the Ruaar Project (Back to School campaign), and I met Chandan through his younger brother, who was still in school. Chandan, however, had dropped out during the COVID-19 pandemic and showed no interest in returning. There was no particular reason behind his absence no financial issues just a lack of motivation and some bad influences. He was on the verge of slipping away from the education system, and I decided to make it my personal mission to bring him back to school.

Determined, I started by building trust. I connected with his younger brother, hoping it would pave the way to Chandan. Eventually, I visited Chandan's home, spoke with his family — who were surprisingly supportive — but Chandan remained distant, indifferent.

Realizing that pushing him wouldn't work, I chose a different approach: I decided to be his friend first. Over the next four days, we built a bond. Beneath the rough exterior, Chandan was a kind and bright student. Slowly, I convinced him to give school another chance.

On the fifth day, I arrived at Chandan's home with a Block Resource Person (BRP) to formally take him back to school. To my shock, his parents told me he had run away the night before. They blamed me, believing my efforts had driven him away.

Disheartened but not defeated, I spoke to his younger brother and learned that Chandan often fled when confronted about school. For the next two days, we searched for him — speaking to his friends, villagers, and even checking nearby areas he was known to visit. Finally, we found him.





Chandan refused to speak to me. But I wasn't ready to give up. My goal was not just to enroll him but to make sure he stayed in school, at least until he completed 12th grade. Yet, a painful dilemma weighed on me: What if I get him back into school, and he drops out again? What if he faces bullying or has another bad experience? These questions haunted me.

During my fellowship journey, two incredible women inspired me — one taught me how to control my emotions, and the other showed me how to get things done, no matter the obstacles.

This inspiration fueled my resolve during my (PDP). Initially, I struggled to choose a topic, but I finally settled on 'Say No to Drugs,' focusing on whitener and cheap intoxicants — substances youth in the community were increasingly drawn to. It was a tough choice, especially given Chandan's circle of friends, who were involved in these habits. I knew if his friends continued using, Chandan would likely follow.

I chose to conduct my PDP in Chandan's panchayat for two reasons: I was already familiar with the community, and I wanted to tackle the drug issue head-on. Convincing the youth to quit was tough, but two of Chandan's friends eventually agreed to leave their habits behind. Though Chandan saw me visiting the panchayat multiple times, we didn't speak - I didn't want to push him further away.

A bigger challenge arose when the boys said they didn't want to return to school; they wanted to work. To make my PDP sustainable, I explored skill development programs. I discovered a foundation offering training in engine operations, mobile assembly, and manufacturing for those who completed 10th grade, and plumbing and electrical work for those who dropped out before then.

Two of Chandan's friends enrolled in courses in Giridih. To my surprise, Chandan later reached out — not to me directly, but through the mobilizer of the partner organization — expressing interest in the electrician course.

Today, as I write this on March 1, 2025, Chandan is leaving Bokaro to pursue his training. I regret not speaking to him before he left, but sometimes, emotions overwhelm me, and my mind goes blank.

Reflecting on my fellowship journey, I remember what my Project Manager once told me:

"Before spreading smiles to millions, try to bring a smile to one child."

I don't know if I made Chandan smile, but I believe I've helped make his life a little better. And maybe that's a start.

Shivam Kumar Gandhi Fellow, B-16 Jharkhand

A Journey of Trust and Self-Discovery through Community Immersion

I started my CI journey with a new experience. I looked for a Cl house, but got rejected many times. I didn't give up and finally found a house. It belonged to a family I didn't know well.

At first, I had trust issues. I slept in the balcony, where I dealt with mosquitoes and fear. I felt alone at night, but I kept going. I used my confidence and trust-building skills to make things work.

Slowly, I built a strong bond with the family. They started to accept me as one of their own. We talked, shared meals, and spent time together. I helped them when they needed it.

I learnt that if you give up, you can't achieve your goals. But if you believe in yourself, you can do anything. I realized that trust and faith are key to strong relationships. When you connect with people based on trust and faith, you can build deep and meaningful bonds.

My Cl journey was a unique and enriching experience. I learned that life has challenges but with confidence and faith, you can overcome them. I learned that trust and faith are essential for strong relationships and lasting connections. This journey taught me valuable lessons about being strong, trusting others, and the importance of human connections. I'll always treasure this experience, which has made me a stronger and more compassionate person.



OUR TEAM



From the Syaahi Team

As we turn the final page of this edition, we want to express our heartfelt gratitude to you, our readers, writers, and supporters who make Syaahi more than just a magazine. It's a space where voices find expression, ideas take shape, and creativity thrives.

Every story, every poem, and every thought shared here is more than just ink on paper, it's a reflection of perspectives, emotions, and experiences that deserve to be heard. Syaahi is not just a publication; it's a movement, a celebration of storytelling, and a journey of learning together.

With each edition, we strive to bring you narratives that inspire, challenge, and ignite creativity. And none of this would be possible without you. So keep reading, keep writing, and keep sharing because every story matters.

With gratitude,

Muskan, Amisha, Madhavi, Abhik, and A<mark>ditya</mark> The Syaahi Magazine Team











Mentored by: Smita Routh



This QR code contains videos of the journey created by fellows. Scan to watch!



SYAAHI IS MORE THAN JUST A MAGAZINE; IT IS A REFLECTION OF VOICES, EXPERIENCES, AND THE PASSION OF THOSE WHO BELIEVE IN THE POWER OF STORYTELLING. THIS EDITION WOULD NOT HAVE BEEN POSSIBLE WITHOUT THE UNWAVERING SUPPORT AND CONTRIBUTIONS OF MANY INDIVIDUALS.

TO THE SENIORS OF BATCH 16, YOUR WISDOM, WARMTH, AND LEADERSHIP HAVE SHAPED OUR JOURNEY IN MORE WAYS THAN WE CAN EXPRESS. YOU HAVE NOT ONLY SHOWN US THE WAY BUT ALSO WALKED BESIDE US WHEN WE NEEDED IT THE MOST. THIS MAGAZINE CARRIES A PART OF YOUR LEGACY.

A HEARTFELT THANK YOU TO THE PREVIOUS TEAMS FROM GF14, GF15, AND GF16 FOR LAYING THE FOUNDATION OF SYAAHI THROUGH THEIR DEDICATION AND CREATIVITY. YOUR EFFORTS IN PREVIOUS EDITIONS HAVE PAVED THE WAY FOR US TO CONTINUE THIS JOURNEY, AND WE TRULY APPRECIATE THE MARK YOU HAVE LEFT.

TO EVERY WRITER, ARTIST, EDITOR, AND CONTRIBUTOR WHO POURED THEIR HEART INTO THIS ISSUE THANK YOU.

YOUR WORDS, CREATIVITY, AND HARD WORK HAVE BROUGHT SYAAHI TO LIFE.

A SPECIAL SHOUTOUT TO THE PIRAMAL SCHOOL OF LEADERSHIP FAMILY. WHETHER THROUGH DIRECT CONTRIBUTIONS, FEEDBACK, OR SILENT SUPPORT, YOU HAVE PLAYED A CRUCIAL ROLE IN MAKING THIS EDITION WHAT IT IS. YOUR PASSION FOR CHANGE AND LEARNING INSPIRES US EVERY DAY.

AND TO EVERYONE WHO BELIEVED IN SYAAHI, WHO SHARED A THOUGHT, A SUGGESTION, OR SIMPLY CHEERED US ON THIS IS FOR YOU.

THANK YOU FOR BEING PART OF THIS JOURNEY. KEEP WRITING, KEEP DREAMING, KEEP CREATING.





